आर्य मुसाफिर

वैदिक विचारधारा का पोषक

केरल वैदिक मिशन नई दिल्ली का मासिक मुखपत्र

हम परम्परा से बलिदानी, बलिदान हमारी परम्परा

आर्य बलिदानी धर्मवीर पं. लेखराम आर्य पथिक

प्रबन्ध सम्पादक
रामनिवास "गुणग्राहक"

संस्थापक
प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु

सम्पादक
सत्येन्द्र सिंह आर्य

प्रकाशक :

केरल वैदिक मिशन, नई दिल्ली

वार्षिक शुल्क ₹ 120/-   आजीवन शुल्क ₹ 1000/-   एक प्रति का मूल्य ₹ 10/-

हमारा संकल्प

(पं. राकेश रानी, सम्पादक-'जनज्ञान' मासिक, नई दिल्ली)

वेद-धर्म की अमर पताका, धरती पर लहरायेंगे।
मानवता की अमृतवाणी, सब तक हम पहुँचायेंगे।।
दयानन्द के सैनिक हैं हम, आगे बढ़ते जायेंगे।
पाखण्डों के दुर्गम गढ़ भी, चूर-चूर कर आयेंगे।।

युग बदला है, बदल रही है, आज मनुज की तरुणाई।
सत्य कांपता खड़ा द्वार पर, पशुता की है बन आई।।
वीरों ने अंगड़ाई ली है, ध्वजा न झुकने पाएगी।
धर्म-न्याय की विजय पताका, लहर-लहर लहरायेगी।।

यह दयानन्द के दिव्य-स्वप्न, साकार बनाने की बेला।
अमर शहीदों की बलि का है, मोल चुकाने की बेला।।
इधर पाप और उधर पुण्य है, पुण्य की लाज बचाओ।
बलि जाकर भी, 'वेद-ध्वजा' का गौरव, गान! गुंजाओ।।

जिस उत्साह और ऋषि मिशन के प्रति प्रतिबद्धता के साथ 'आई फौज दयानन्द वाली' द्वारा यह मासिक पत्र आरम्भ किया जा रहा है, उसकी सही और सटीक अभिव्यक्ति इस कविता में हो रही है जो पूज्य माता पं. राकेश रानी जी द्वारा लगभग साढ़े चार दशक पूर्व लिखी गई थी। महर्षि दयानन्द का लक्ष्य वैदिक विचारधारा के प्रचार-प्रसार द्वारा एक ऐसे समाज की स्थापना करना था जिसमें न कोई मत हो, न जाति, पंथ, फिरका या वाद। अपितु भूगोल के सभी मनुष्य सच्चे अर्थों में मनुष्य बनकर, पक्षपात-स्वार्थ छोड़ 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से वेद के आदेश की पूर्ति कर 'यत्र विश्वं भवत्येक नीडम्' के स्वप्न को साकार बनाएँ। कंप्यूटर युग की युवा पीढ़ी का यह प्रयास उसी दिशा में आगे बढ़ेगा, ऐसी आशा है।

- सम्पादक

सामाजिक व सदाचार पुनर्निर्माण का मासिक-पत्र

आर्य मुसाफिर

वर्ष-1 जनवरी 2013 अंक-1

वार्षिक शुल्क ₹ 120/-
आजीवन शुल्क ₹ 1000/-
एक प्रति का मूल्य ₹ 10/-

●

प्रकाशक :
केरल वैदिक मिशन
नई दिल्ली

विशेष : आर्य मुसाफिर में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनसे सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है।

विषयानुक्रमणिका

हमारा संकल्प	2
संपादकीय	3
मंत्र....	6
वेदधर्म और विज्ञान	10
जीना है तो	12
लौह पुरुष स्वामी....	15
ईसाई मत	18
सत्ता हस्ता.	21
नेतृत्व कौन करे	24
गोमांस निर्यात...	25
ऋषिवर	26
प्रचण्ड परिवर्तन	28

एक नई आर्यसामाजिक पत्रिका का शुभारम्भ

आर्य जगत् के प्रतिष्ठित विद्वान्, दो सौ पचास से अधिक पुस्तकों के लेखक और सम्पादक, प्रखर वक्ता और प्रामाणिक इतिहासकार माननीय प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी पिछले एक डेढ़ दशक से यह संकल्प मन में संजोये हुए थे कि एक स्तरीय मासिक पत्रिका आरम्भ की जानी चाहिए। इस संकल्प को कार्य रूप देने के लिए वे बार-बार मुझे आदेश देते रहे। आर्यसमाज के लिए बहुत कुछ कर गुजरने की अन्तर्ज्वाला उनके अन्दर हर समय दहकती रहती है, धधकती रहती है। इसी कारण अपने जीवन में जिज्ञासु जी इतिहास लेखन का इतना विशाल कार्य कर सके हैं। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि उन्होंने जोखिम उठाकर अपनी सामर्थ्य से अधिक कार्य किया है। श्रद्धेय स्वामी सत्यप्रकाश जी ने जिज्ञासु जी को एक बार कहा - "राजेन्द्र, धर्मवीर पं. लेखराम की परम्परा के तुम आखिरी व्यक्ति हो।" पूज्य स्वामीजी की बात अक्षरशः ठीक थी। पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महाशय राजपाल जैसे वीर बलिदानियों और स्वामी स्वतंत्रानन्द, स्वामी वेदानन्द, महात्मा नारायण स्वामी, पं. भगवद्दत्त, स्वामी दर्शनानन्द आदि संन्यासियों- विद्वानों को सादर स्मरण किये बिना जिज्ञासु जी का कोई व्याख्यान पूरा नहीं होता। वैदिक मिशन के प्रति प्रतिबद्धता की दृष्टि से तो आदरणीय जिज्ञासु जी ने पं. लेखराम को, उनके विचारों को और उनके जुनून को अपने जीवन में जिया है। आज आर्य समाज में अधिकांश लोग पं. लेखराम की अन्तिम इच्छा (वसीयत) को भूल चुके हैं। आर्य पथिक की इच्छा कि "आर्य समाज से तहरीर और तकरीर का काम बन्द न हो" माननीय जिज्ञासु जी के जीवन का मूल मन्त्र है। इसी के कार्यान्वियन में उन्होंने अपना जीवन खपाया है। एक स्वतंत्र आर्य सामाजिक पत्रिका के प्रकाशन हेतु व्याकुलता उनके इसी जुनून का परिणाम है।

पिछले एक दशक में आर्य समाज में एक और अति आश्चर्यजनक

कार्य हुआ। अधिकांश पदाधिकारी दित रात अपनी यह चिन्ता व्यक्त करते रहते हैं कि "युवा पीढ़ी आर्य समाज की ओर आकृष्ट नहीं हो रही है। जब पुरानी पीढ़ी के लोग दिवंगत हो जाऐं तो आर्य समाज का क्या बनेगा।" जिज्ञासु जी ने आर्य समाज को इस चिन्ता से मुक्त कर दिया। उत्तर से दक्षिण तक पूरे भारत में बड़ी संख्या में युवाओं को जिज्ञासु जी ने आर्य समाज से जोड़ा है। इन युवाओं में अधिकांश तो बीस से पैंतीस वर्ष की आयु वाले ही हैं, सभी स्वाध्यायशील हैं। आर्य समाज से किसी प्रकार की अपेक्षा नहीं रखते, किसी संगठन में किसी पद की इच्छा नहीं रखते। वेद प्रचार का जो भी कार्य इण्टरनेट के माध्यम से या वैदिक साहित्य के प्रकाशन के द्वारा ये लोग कर रहे हैं, वह अपने संसाधनों से कर रहे हैं। आदरणीय जिज्ञासु जी ने इन युवाओं को स्नेह से **"आई फौज दयानन्द वाली"** नाम दिया है। इस कार्य में मैं भी माननीय जिज्ञासु जी के साथ हूँ और यथा सामर्थ्य सहयोग करता आ रहा हूँ। प्रियवर संजीव कुमार, वाशी, पंकज शाह (परतवाड़ा, जिला अमरावती, महाराष्ट्र), राजवीर, अनिल आर्य, महेन्द्र सिंह आर्य, डॉ. हर्ष वर्धन आर्य (महाराष्ट्र) आदि युवा महर्षि के मिशन के काम को आगे बढ़ा रहे हैं। पिछले तीन चार दशकों से आर्यसमाज का शास्त्रार्थ का जो काम शिथिल पड़ गया था, उसे भी इन युवाओं ने इण्टरनेट के माध्यम से तथा अन्यथा भी पुनः उत्साहपूर्वक सफलता के साथ आरम्भ किया है। सत्य को सुनिश्चित करने के लिए अन्य मतावलम्बियों के साथ विचार-विमर्श नाम इस प्रक्रिया को दिया है और इसमें "आई फौज दयानन्द वाली" के सेनानियों को आशातीत सफलता मिल रही हैं। ये सभी बधाई एवं साधुवाद के पात्र हैं।

पत्रिका के प्रकाशन की पृष्ठभूमि में एक और महत्वपूर्ण तथ्य है। ऋषि दयानन्द जी चाहते थे कि वैदिक साहित्य का भारत की विभिन्न भाषाओं में तथा विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो और प्रकाशन हो, जिससे अधिकाधिक लोग वेद की विचारधारा को समझें और सार्वभौम सत्यों तक पहुँचने में उन्हें सरलता हो जाए। "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का यही एक उपाय है। मान्य जिज्ञासु जी एवं उनके सहयोगी श्री डॉ. अशोक आर्य (मण्डी डबवाली वाले) पिछले पांच दशकों से केरल वैदिक मिशन नाम के एक अनौपचारिक (अपंजीकृत) संगठन के माध्यम से केरल में ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों एवं अन्य वैदिक साहित्य के मलयालम भाषा में अनुवाद एवं प्रकाशन हेतु विपुल आर्थिक सहयोग करते आ रहे हैं। आज मलयालम भाषा में ऋषि के जो ग्रन्थ या वेद भाष्य तथा अन्य वैदिक साहित्य दृष्टिगोचर हो रहा है उसमें अधिकांश के लिए श्रेय इन्हीं दो मनीषियों (प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु और डॉ. अशोक आर्य) को दिया जा सकता है। आयुवार्धक्य के कारण वर्ष 2011 में तीसरी तिमाही में इनके द्वारा केरल वैदिक मिशन की औपचारिक बैठक करके उस संगठन का पूर्ण प्रभार सर्वसम्मति से श्री संजीव कुमार एवं श्री राजवीर आर्य को सौंप दिया गया था। अब उस संगठन को पंजीकृत करा लिया गया है। मिशन की नियमावली में ही यह प्रावधान किया गया है कि संगठन की एक मासिक पत्रिका निकाली जाए। उसी दिशा में यह प्रयास है। पत्रिका के माध्यम से केरल वैदिक मिशन द्वारा किये जाने वाले कार्यकलापों की जानकारी आर्य जनों को होती रहेगी तथा आर्यजगत् के समाचारों से भी उन्हें अवगत कराया जाएगा। श्रद्धेय जिज्ञासु जी के आदेशानुसार मेरे द्वारा सम्पादन का कार्य तो निमित्त मात्र है। वास्तव में यह केरल वैदिक मिशन का मासिक मुखपत्र है।

वर्तमान समय में यद्यपि स्वाध्याय के प्रति जन सामान्य की रुचि कम होती जा रही है, तथापि पत्र-पत्रिकाओं एवं साहित्य के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। धर्मान्तिरण के उद्देश्य से ईसाई एवं इस्लाम मतावलम्बी पत्रिकाओं, ट्रैक्टों एवं पुस्तकों का भरपूर उपयोग कर रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेले में तथा महानगरों में प्रदशर्नियों आदि (जैसे मेरठ में नौचन्दी मेला) में इस्लामी साहित्य की स्टालों की भरमार होती है। वैदिक साहित्य की या तो कोई दुकान होती नहीं या अगर कोई होती भी है तो पुस्तकों आदि का मूल्य इतना अधिक होता है कि खरीदना मुश्किल होता है जबकि इस्लामी साहित्य नाम मात्र के मूल्य पर उपलब्ध होता है, खरीदने वाले अधिकतर हिन्दु होते हैं। एक पुस्तक खरीदने वाले को दो चार पुस्तकें भेंट स्वरूप दे देते हैं और इस प्रकार हिन्दुओं के घर में इस्लाम की विचारधारा का प्रवेश हो रहा है। आर्य समाज जब तक उन्हीं के स्तर पर आर्य पत्र-पत्रिकाओं सहित वैदिक साहित्य का प्रकाशन नहीं करता, तब तक बात बनने वाली नहीं है। इस समय आर्य सामाजिक क्षेत्र में परोपकारी पाक्षिक, वैदिक-पथ मासिक, दयानन्द सन्देश, आर्य संसार, सुधारक, वेदवाणी आदि मासिक पत्रिकाएं वेद-प्रचार का कार्य नियमित रूप से कर रही हैं। भारत राष्ट्र के आकार को देखते हुए यह प्रयास ऊँट के मुँह में जीरे के समान ही है। जिज्ञासु जी का मन है कि एक-एक प्रान्त में कई-कई सशक्त पत्रिकाएँ निकलनी चाहिए और उनकी प्रसार संख्या भी अधिक हो। भविष्य के किसी अंक में हम जिज्ञासु जी के लेख के माध्यम से उनके एतद्विषयक विचारों से उन्हीं के शब्दों में पाठकों को अवगल करायेंगे। ईसाइयत और इस्लामी साहित्य की अँधी के सामने वैदिक साहित्य की अँधी उससे भी वेगवान् हो, ऐसी उनकी इच्छा है।

नई पत्रिका हम 'आर्य मुसाफिर' नाम से आरम्भ कर रहे हैं। यह पं. लेखराम जी के नाम से जुड़ा हुआ शब्द है। इसी नाम की (उर्दु) पत्रिका से पण्डित जी जुड़े रहे, वे उसके सम्पादक भी रहे। समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं के निबन्धक से हम इसी नाम से पत्रिका का पंजीकरण प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। हम चाहते हैं कि उनके सरोकारों का हम स्मरण करते रहें। महर्षि के जिन्होंने दर्शन किए और उनसे अपनी शंकाओं का समाधान किया- ऐसे पं. लेखराम आर्य पथिक का पुण्य स्मरण करके कौन आर्य गौरवान्वित अनुभव नहीं करेगा। ईसवी सन 1858 में जन्में पण्डित लेखराम ने महर्षि के प्रथम और अन्तिम बार दर्शन अजमेर में सेठ फतेहमल की वाटिका में 17 मई 1880 ई. को किए थे। इस समागम का हाल आर्य पथिक ने अपने शब्दों में इस प्रकार दिया है-

"स्वामी दयानन्द के दर्शन से यात्रा के सब कष्ट विस्मृत हो गए और उनके सत्य उपदेशों से सर्व संशय निवृत्त हो गए।"

महर्षि दयानन्द एवं उनके द्वारा उपदिष्ट वैदिक विचारों से पं. लेखराम जी इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने पुलिस की सरकारी नौकरी छोड़कर आर्य समाज का उपदेशक बनना श्रेयस्कर समझा। उस युग में यह कोई साधारण काम नहीं था। उसी नाम नामी का उपनाम पत्रिका के नामकरण के लिए हमने उपयुक्त समझा। युवा पीढ़ी के नये संगठन को, उसकी पत्रिका को एवं उनके द्वारा किये जाने वाले वेद प्रचार के कार्य को आर्य जनों का स्नेह, सहयोग और संरक्षण मिलेगा, ऐसी आशा है।

— सत्येन्द्र सिंह आर्य

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। – महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश– यहाँ प्रथम मन्त्र में अग्नि शब्द करके ईश्वर ने अपना और भौतिक अग्नि अर्थ का उपदेश किया है -

ओ३म्– अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्
होतारं रत्नधातमम् ।।1।। (ऋग्. 1/1/1)

अग्निम् । ईळे । पुरःऽहितम् । यज्ञस्य । देवम् । ऋत्विजम् । होतारम । रत्नऽधातमम् ।।1।।

पदार्थः–(अग्निम्) परमेश्वरं भौतिकं वा-इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गुरुत्मान्। एक सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।। ऋ0 1।164।46 अनेनैकस्य सतः परब्रह्मण इन्द्रादीनि बहुधा नामानि सन्तीति वेदितव्यम्। तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः। तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः।। य. 32।1 यत्सच्चिदानन्ददिलक्षणं ब्रह्म तदेवात्राग्न्यादिनामवाच्यमिति बोध्यम्। *ब्रह्म ह्यग्निः। श0 1।4।2।11। आत्मा वा अग्निः। श0 9.2.3.2* अत्राग्निर्ब्रह्मात्मनोर्वाचकोऽस्ति। *अयं वा अग्निः प्रजाश्च प्रजापतिश्च। श0 9।1।2।42* अत्र प्रजाशब्देन भौतिकः प्रजापतिशब्देनेश्वरश्चाग्निर्ग्राह्यः। *अग्निर्वै देवानां व्रतपतिः। एतद्ध वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यम्। श0 1।1।1।2, 5,* सत्याचार नियमपालनं व्रतं तत्पतिरीश्वरः। त्रिभिः पवित्रैरपुपोह्य1कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन्। वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभिरादिद् द्यावापृथिवी पर्य्यपश्यत्।। ऋ. 3।26।8 अत्राग्निशब्दस्यानुवृत्तेः प्रजानन्निति ज्ञानवत्वात् पर्य्यपश्यदिति सर्वज्ञत्वादीश्वरो ग्राह्यः।

यास्कमुनिरत्रोभयार्थकरणायाग्निशब्दपुरःसरमेतन्मन्त्रमेवं व्याचष्टे - *अग्निः कस्मादग्रणीभवत्यग्रं यज्ञेषु प्रणीयितेऽङ्ग नयति सन्नममानांऽक्रापनो भवतीति स्थोलाष्ठीविर्न क्रापयति न स्नेहयति त्रिभ्य आख्यातेभ्यो जायत इति शाकपुणिरितादकाद्दग्धाद्वा नीतात्स खल्वेतकारमादत्ते गकारमनत्कवी देहतेर्वा नीःपरस्तस्यैषा भवतीति-* अग्निमीळेऽग्नि *याचामीळध्यणाकर्मा पजाकर्मा वा देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वाद्युस्थानो भवतीति वा यो देवः सा देवता। होतारं ह्वातार जुहोतेर्होतरित्यौणीवमो रत्नधातमम् रमणायानां धनानां दातृतमम्। निरु. 7।14-15।*

अग्रणीः सर्वोत्तमः सर्वेषु यज्ञेषु पूर्वमीश्वरस्यैव प्रतिपादनात्तस्यात्र ग्रहणम्। दग्धादिति विशेषणाद्भौतिकस्यापि च।

प्रशसितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि। रुक्माभं

स्वप्नधीगम्यं विद्यातंपुरुषं परम् ।।1।। एतमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्य प्रजापतिम्। इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम्।।2।। मनु0 अ0 12। श्लोक 122, 123 अत्राप्यग्न्यादीनि परमेश्वरस्य नामानि सन्तीति।

ईळें अग्निं विंपश्चितं गिरा यज्ञस्य साधंनम्। श्रष्टीवानं धितावांनम्।। ऋ. 3।।27।2। विपश्चितमीळे इति विशेषणादग्निशब्देनात्रेश्वरो गृह्यते, अनन्तविद्यावत्वाच्चेतनस्वरूपत्वाच्च।

अथ केवलं भौतिकार्थग्रहणाय पमाणानि- *यदश्वं तं पुरस्तादुदश्रयंस्तस्याभयेनाष्ट्रे निवाते-ऽग्निरजायत तस्माद्यत्राग्निं मन्थिध्यन्त्स्यात्तदश्वमानेतवै ब्रयात्। स पूर्वणोपतिष्ठते वज्रमेवैतुच्छयंति तस्याभयोनाष्ट्रे निवातेऽग्निर्जायते। श0 2।1।4।16। वृषो अग्निः। अश्वो ह वा एष भूत्वा देवेभ्यो यज्ञं वहति। श0 1।3।3।29-30।* **वृषवधानानां वोढत्वाद् वृषोऽग्निः। तथाऽयमग्निराशुगम-यितृत्वेनाश्वो भूत्वा कलायन्त्रैः प्रेरितः सन् देवेभ्यो विद्वद्भ्यः शिल्पविद्याविद्भ्यो मनुष्येभ्यो विमानादियानसाधनसंगतं यानं वहति प्रापयतीति** *तूर्णिहव्यवाडिति। श0 1।3।4।12।* **अयमग्निर्हव्यानां यानानां प्रापकत्वेन शीघ्रतया गमकत्वाद्धव्यवाट् तूणिश्रेति।** *अग्निर्वै योनिर्यज्ञस्य। श. 1।4।3।11* **इत्याद्यनेकप्रमाणैश्रश्वनाम्ना भौतिकोऽग्निग्वान्न गृह्यते, आशुगमनहेतुत्वादश्वोऽग्निविज्ञेयः। वृषों अग्निः समिंध्यतेऽश्वो न देववाहंनः। तं हविंमन्त ईळते।। ऋ. 3।27।14। शिल्पिभिरयमग्नियत्रकलाभिर्यानेषु प्रदीप्यते तदा देववाहनो देवान् यानस्थान् विदुषः शीघ्रं देशान्तरेऽश्व इव वृष इव च प्रापयति, ते हविष्मन्तो मनुष्यो वेगादिगुणवन्तमश्वमग्निमीडते कार्य्यार्थमधीच्छन्तीति वेद्यम्।**

(ईळे) स्तुवे याचे अधीच्छामि प्रेरयामि वा (पुरोहितं) पुरस्तात्सर्वं जगद्धाति छेदनधारणाकर्षणादिगुणाश्चापि तम्। *पुरोहितः पुर एनं दधति होत्राय वृतः कृपायमाणोऽन्वध्यायत् निरु. 2।12।* **(यज्ञस्य) इज्यतेऽसौ यज्ञस्तस्य महिम्नः कर्मणो विदुषां सत्कारस्य संगतस्य सत्संगत्योत्पन्नस्य विद्यादिदानस्य शिल्पक्रियोत्पाद्यस्य वा।** *यज्ञः कस्मात्प्रख्यातं यजति कर्मेति नेरुक्ता यांचो भवतीति वा यजरुन्ना भवतीति वा बहुकृष्णाजिन इत्यौपमन्यवो यजुष्येनं न यन्तीति वा। निरु. 3।19।* **(देवम्) दातारं हर्षकरं विजेतारं द्योतकं वा (ऋत्विजम्) य ऋतौ ऋतौ प्रत्युत्पत्तिकालं संसारं सङ्गतं यजति करोति तथा च शिल्पसाधनानि सङ्गमयति सर्वेषु ऋतुषु यजनीयस्तम्।** *ऋत्विदधृग0 । अ. 3।2।59* **अनेन कर्त्तरि निपातनम् तथा कृतो बहुलमिति कर्मणि वा। (होतारम्) दातारमादातारं वा (रत्नधातमम्) रमणीयानि पृथिव्यादीनि सुवर्णादीनि च रत्नानि दधाति धापयतीति रत्नधा, अतिशयेन रत्नधा इति रत्नधातमस्तम्।।1।।**

अन्वयः- अहं यज्ञस्य पुरोहितमृत्विजं होतारं रत्नधातमं देवमग्निमीळे।।1।।

भावार्थः- अत्र श्लेषालङ्कारेणोभयार्थग्रहणमस्तीति बोध्यम्। इतोऽग्रे यत्र यत्र मन्त्रभूमिकायामुपदिश्यत इति क्रियापदं प्रयुज्यतेऽस्य सर्वत्र कर्तेश्वर एव बोध्यः। कुतः, वेदानां तेनैवोकत्वात् पितृवत्कृपायमाण

ईश्वरः सर्वविद्याप्राप्तये सर्वजीवहितार्थ वेदोपदेशं चकार। यथा पिताऽध्यापको वा स्वपुत्रं शिष्यं च प्रति त्वमेवं वदैवं कुरु सत्यं वद पितरमाचार्य्यं च सेवस्वानृतं मा कुर्वित्युपदिशति, तथैवात्र बोध्यम्। वेदश्च सर्वजीवकल्याणार्थमाविर्भूतः। एवमथोऽत्रोत्तमपुरुषप्रयोगः। वेदोपदेशस्य परोपकारार्थत्वात्।

अत्राग्निशब्देन परमार्थव्यवहार विद्यासिद्धये परमेश्वरभौतिकौ द्वावर्थौ गृह्यते। पुरा आर्य्यैर्याऽश्वविद्यानाम्ना शीघ्रगमनहेतुः शिल्पविद्या संपादितेति श्रूयतेसाग्निविद्यैवासीत्। परमेश्वरस्य स्वयंप्रकाशत्वसर्वप्रकाशकत्वाभ्यामनन्तज्ञानवत्वात् भौतिकस्य रूपदाहप्रकाशवेगछेदनादिगुणवत्वाच्छिल्पविद्यायां मुख्यहेतुत्वाच्च प्रथमं ग्रहणं कृतमस्तीति वेदितव्यम् ।1।।

पदार्थान्वयभाषा – (यज्ञस्य) हम लोग विद्वानों के सत्कार सङ्गम महिमा और कर्म के (होतारम्) देने तथा ग्रहण करने वाले (पुरोहितम्) उत्पति के समय से पहिले परमाणु आदि सृष्टि के धारण करने और (ऋत्विजम्) बारंबार उत्पत्ति के समय में स्थूल सृष्टि के रचनेवाले तथा ऋतु ऋतु में उपासना करने योग्य (रत्नधातमम्) और निश्चय करके मनोहर पृथिवी वा सुवर्ण आदि रत्नों के धारण करने वा (देवम्) देने तथा सब पदार्थों के प्रकाश करने वाले परमेश्वर की (ईळे) स्तुति करते हैं।

तथा उपकार के लिए (यज्ञस्य) हम लोग विद्यादि दान और शिल्पक्रियाओं से उत्पन्न करने योग्य पदार्थों के (होतारम्) देने हारे तथा (पुरोहितम्) उन पदार्थों के उत्पन्न करने के समय से पूर्व भी छेदन धारण और आकर्षण आदि गुणों के धारण करने वाले (ऋत्विजम्) शिल्पविद्या साधनों के हेतु (रत्नधातमम्) अच्छे अच्छे सुवर्ण आदि रत्नों के धारण कराने तथा (देवम्) युद्धादिकों में कलायुक्त शस्त्रों से विजय कराने हारे भौतिक अग्नि की (ईळे) वारंवार इच्छा करते हैं।

यहां 'अग्नि' शब्द के दो अर्थ करने में प्रमाण ये हैं कि - (इन्द्रं मित्र0) इस ऋग्वेद के मन्त्र से यह जाना जाता है कि एक सद्ब्रह्म के इन्द्र आदि अनेक नाम हैं। तथा (तदेवाग्नि0) इस यजुर्वेद के मन्त्र से भी अग्नि आदि नामों करके सच्चिदानन्दादि लक्षणवाले ब्रह्म को जानना चाहिए। (ब्रह्म ह्य0) इत्यादि शतपथ ब्राह्मण के प्रमाणों से अग्नि शब्द ब्रह्म और आत्मा इन दो अर्थों का वाची है। (अयं वा0) इस प्रमाण में अग्नि शब्द से प्रजा शब्द करके भौतिक और प्रजापति शब्द से ईश्वर का ग्रहण होता है। (अग्नि0) इस प्रमाण से सत्याचरण के नियमों का जो यथावत् पालन करना है सो ही व्रत कहाता है, और इस व्रत का पति परमेश्वर है। (त्रिभिः पवित्रैः0) इस ऋग्वेद के प्रमाण से ज्ञानवाले तथा सर्वज्ञ प्रकाश करने वाले विशेषण से अग्नि शब्द करके ईश्वर का ग्रहण होता है।

निरुक्तकार यास्कमुनिजी ने भी ईश्वर और भौतिक पक्षों को अग्नि शब्द की भिन्न भिन्न व्याख्या करके सिद्ध किया है, सो संस्कृत में यथावत् देख लेना चाहिए, परन्तु सुगमता के लिए कुछ संक्षेप से यहां भी कहते हैं। यास्कमुनिजी ने स्थौलाष्ठीवि ऋषि के मत से अग्नि शब्द का अग्रणी=सबसे उत्तम अर्थ किया है, अर्थात् जिसका सब यज्ञों ने पहिले प्रतिपादन होता है वह

सबसे उत्तम ही है। इस कारण अग्नि शब्द से ईश्वर तथा दाहगुणवाला भौतिक अग्नि इन दो ही अर्थों का ग्रहण होता है।

(प्रशासितारं0; एतमे0) मनुजी के इन दो श्लोकों में भी परमेश्वर के अग्नि आदि नाम प्रसिद्ध हैं। (ईळे0) इस ऋग्वेद के प्रमाण से भी उस अनन्त विद्यावाले और चेतनस्वरूप आदि गुणों से युक्त परमेश्वर का ग्रहण होता है।

अब भौतिक अर्थ के ग्रहण करने में प्रमाण दिखलाते हैं- (यदश्वं0) इत्यादि शतपथ ब्राह्मण के प्रमाणों से अग्नि शब्द करके भौतिक अग्नि का ग्रहण होता है। यह अग्नि बैल के समान सब देश देशान्तरों में पहुंचानेवाला होने के कारण वृष और अश्व भी कहाता है, क्योंकि वह कलाओं के द्वारा अश्व अर्थात् शीघ्र चलने वाला होकर शिल्पविद्या के जानने-वाले विद्वान् लोगोंके विमान आदि यानों को वेग से वाहनों के समान दूर दूर देशों में पहुंचाता है।(तूर्णि0) इस प्रमाण से भी भौतिक अग्नि का ग्रहण है, क्योंकि वह उक्त शीघ्रता आदि हेतुओं से हव्यवाट् और तूर्णि भी कहाता है। (अग्निर्वै यो0) इत्यादिक और भी अनेक प्रमाणों से अश्व नाम करके भौतिक अग्नि का ग्रहण किया गया है। (वृषो0) जबकि इस भौतक अग्नि को शिल्पविद्यावाले विद्वान् लोग यन्त्रकलाओं से सवारियों में प्रदीप्त करके युक्त करते हैं, तब (देववाहनः) उन सवारियों में बैठे हुए विद्वान् लोगों को देशान्तर में बैलों वा घोड़ों के समान शीघ्र पहुंचाने वाला होता है। हे मनुष्यों! तुम लोग (हविष्मन्तम्) वेगादि गुणवाले अश्वरूप अग्नि के गुणों को (ईळते) खोजो। इस प्रमाण से भी भौतिक अग्नि का ग्रहण है।।1।।

भावार्थभाषा :– इस मन्त्र में श्लेषालंकार से दो अर्थों का ग्रहण होता है। पिता के समान कृपाकारक परमेश्वर सब जीवों के हित और सब विद्याओं की प्राप्ति के लिये कल्प-कल्प की आदि में वेद का उपदेश करता है। जैसे पिता वा अध्यापक अपने शिष्य वा पुत्र को शिक्षा करता है कि तू ऐसा कर, ऐसा वचन कह, सत्य वचन बोल, इत्यादि शिक्षा को सुनकर बालक वा शिष्य भी कहता है कि सत्य बोलूंगा, पिता और आचार्य की सेवा करूंगा, झूठ न कहूंगा, इस प्रकार जैसे परस्पर शिक्षक लोग शिष्य वा लड़कों को उपदेश करते हैं, वैसे ही 'अग्निमीळे0' इत्यादि वेदमन्त्रों में भी जानना चाहिए। क्योंकि ईश्वर ने वेद सब जीवों के उत्तम सुख के लिए प्रकट किया है। इसी 'अग्निमीळे0' वेद के उपदेश का परोपकार फल होने से इस मन्त्र में 'ईडे' यह उत्तम पुरुष का प्रयोग भी है।

(अग्निमीले0) परमार्थ और व्यवहार विद्या की सिद्धि के लिए अग्नि शब्द करके परमेश्वर और भौतिक ये दोनों अर्थ लिए जाते हैं। जो पहले समय में आर्य लोगों ने अश्वविद्या के नाम से शीघ्र गमन का हेतु शिल्पविद्या उत्पन्न की थी वह अग्निविद्या की ही उन्नति थी। आप ही आप प्रकाशमान सबका प्रकाश और अनन्त ज्ञानवान् आदि हेतुओं से अग्निशब्द करके परमेश्वर, तथा रूप दाह प्रकाश वेग छेदन आदि गुण और शिल्पविद्या के मुख्य साधक आदि हेतुओं से प्रथम मन्त्र में भौतिक अर्थ का ग्रहण किया है।।1।।

ओ३म्

वेद – धर्म और विज्ञान के मूल स्रोत हैं

रामनिवास गुणग्राहक, गांव-सूरौता, पत्रालय-अवार, जनपद-भरतपुर, राज.

आज विज्ञान का युग है। विज्ञान ने मानव जाति को जितनी सुख-सुविधाएँ प्रदान की हैं, अगर विचारपूर्वक देखें तो दुःख-दुविधाएँ उससे कहीं अधिक उपस्थित कर दी हैं। इसे विज्ञान का दोष कहने की अपेक्षा यह कहना कहीं अधिक ठीक रहेगा कि विज्ञान के क्षेत्र में काम करने या कराने वाले लोगों पर स्वार्थजन्य विविध दुष्प्रवृत्तियाँ इस प्रकार सिर-चढ़कर बोलने लगीं कि उन्होंने वैज्ञानिक अनुसन्धानों के मूल में लोक-कल्याण के स्थान पर स्वार्थ-साधना को अधिक महत्व दिया। आज स्थिति यह है कि विज्ञान के क्षेत्र में उन्नतिशील कहे जाने वाले देश अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों को शक्ति व शोषण का पर्याय बनाकर संसार के अधिसंख्य मानवों का जीवन नर्क बनाने पर तुले हुए हैं। भांति-2 के कानून बनाकर विद्या पर एकाधिकार जताने वाले भूल जाते हैं कि यह विज्ञान संसार में किसी की बपौती नहीं। कम से कम योरोप तो ऐसा दावा कर ही नहीं सकता। यह सच है कि योरोप ने एक लम्बे समय तक तथाकथित धर्म के साथ द्वन्द्व-युद्ध करके, अपने कई वैज्ञानिकों का बलिदान देकर विज्ञान को जीवन व जवानी प्रदान की है, मगर इससे उसे यह अधिकार तो नही मिल जाता कि वह हजारों या लाखों वर्ष पूर्व विज्ञान के क्षेत्र में अद्भुत विकास प्राप्त भारत के गुण-गौरव का तिरस्कार करता रहे। हम भारतीयों के लिए यह अत्यन्त गर्व की बात है कि हमारा इतिहास, हमारी संस्कृति, हमारा साहित्य महानतम् वैज्ञानिक उपलब्धियों से भरे पड़े हैं। मानव जाति का बड़ा सौभाग्य होता यदि स्वतन्त्र भारत का संविधान भारतीय संस्कृति के प्राचीन ग्रन्थो के शाश्वत सिद्धान्तों के आलोक में बनाया जाता। संसार के ज्ञान वैभव सम्पन्न राष्ट्र की इतनी दुर्गति नहीं होती, अगर स्वतन्त्र भारत की बागडोर भारतीय ज्ञान-निधि से परिचित किसी सिद्धान्त-निष्ठ देशभक्त के हाथों सौंपी होती।

भारत का ज्ञान-विज्ञान कितना उत्कृष्ट था, यह जानना बड़ा रोचक एवं आत्म-सम्मान को जगाने वाला होगा। लिम्का बुक ऑफ रिकार्डस के अनुसार 400 वर्ष ई.पू. सुश्रुत ने सर्वप्रथम प्लास्टिक सर्जरी का प्रयोग किया था। ज्यूइश इन्साइक्लोपीडिया का मानना है कि न्यूटन से पूर्व गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त भारत में 'भास्कराचार्य' ने प्रतिपादित किया था। इसी में कहा गया है कि ई.पू. 499 वर्ष सर्वप्रथम प्रथम ग्रहों की गणना भारत के ही 'आर्यभट्ट' ने की थी। जर्मनी के डॉ. थामस कहते हैं कि सिन्धु घाटी में मिले भार मापक यन्त्र भारतीयों के दशमलव प्रणाली के ज्ञान को प्रकट करते हैं। 'द करंट सांइस' पत्रिका के अनुसार अशोक स्तम्भ भारतीयों के धातु-ज्ञान का स्पष्ट प्रमाण हैं। 'नेशनल साइंस सेण्टर' नई दिल्ली का मानना है कि विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाओं एवं रासायनिक रंगों का प्रयोग भारत में पांचवी शताब्दी से हो रहा है। प्रो. विल्सन कहते हैं -'गोलों का आविष्कार सर्वप्रथम भारत में हुआ, मि. ईलियट के अनुसार, 'यह आश्चर्य की बात है कि आज गोलों को योरोप में लोग नवीन आविष्कार समझते हैं। मि. डफ लिखते हैं 'हिन्दुओं का विज्ञान ऐसा विस्तृत है कि योरोपीय विज्ञान के सब अंग वहां

मिलते हैं।' मोनियर विलियम्स लिखते हैं कि योरोप के प्रथम दार्शनिक प्लेटो और पीथागोरस दोनों ही दर्शनशास्त्र के सम्बन्ध में भारतीयों के ऋणी हैं। अमेरिका के विद्वान डेलमार 'इण्डियन रिव्यू' में एक लेख द्वारा सिद्ध करते हैं कि पश्चिमी जगत् को जिन बातों के लिए अभिमान है, वे वास्तव में भारत से ही वहां गई थी। वे लिखते हैं कि ज्योतिष, वैद्यक, चित्रकारी व कानून भी योरोप को भारतीयों ने ही सिखाये हैं। प्रो. मैक्समूलर जैसे दिग्गज जब यह लिखें कि 'सारी आर्य जाति ही वैज्ञानिकों की जाति थी' तो मानना पड़ेगा कि हमारी वैज्ञानिक उपलब्धियाँ निश्चित रूप से बहुत महान् रही होंगी।

हमारे महान् इतिहास की महान् उपलब्धियाँ जो संसार को आज भी प्रभावित कर रही हैं, शोक! कि हम भारतीय उनसे परिचित नहीं हैं। हमारे मानसिक गुलाम शासक अपने गुण-गौरव की अनदेखी करके योरोप के गीत गाये जा रहे हैं। समय की मांग है कि हम अपने स्वर्णिम अतीत का पुनरावलोकन करें। चिन्तन और मनन करें कि हम साम्राज्यवादी षडयन्त्रों के बहकावे में आकर उनके पिछलग्गू क्यों बन रहे हैं। हमें सोचना होगा कि हमारे गौरवशाली इतिहास में इतनी चमक किन तत्वों के कारण थी? सारा विश्व मानता है कि ऋग्वेद संसार का प्राचीनतम् ग्रन्थ है। हमारी भारतीय धारणा यह है कि चारों वेद ही प्राचीनतम् ग्रन्थ हैं, जो दो अरब वर्ष पूर्व सृष्टि के प्रारम्भ में ईश्वर ने चार ऋषियों के अन्तःकरण में प्रकाशित किये थे। वे वेद ही संसार के समस्त ज्ञान-विज्ञान के मूल स्रोत हैं। आज से 150 वर्ष पूर्व हम ऐसा कह तो सकते थे लेकिन सिद्ध नहीं कर सकते थे। महर्षि देव दयानन्द सरस्वती नाम के एक महानात्मा वाले ज्ञान-पुरुष के परम पुरुषार्थ के कारण आज हम डंके की चोट पर कह सकते हैं कि वेद समस्त ज्ञान-विज्ञान के मूल स्रोत हैं। महर्षि दयानन्द के अनुसार वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।

वेद में चार विषय हैं - विज्ञान काण्ड, कर्म काण्ड, उपासना काण्ड और विज्ञान ज्ञान काण्ड। ऋषिवर के इस विचार पर टिप्पणी करते हुए श्री अरविन्द लिखते हैं, 'वेदों में केवल धर्म ही नहीं विज्ञान भी है, दयानन्द के इस विचार में चौकने वाली बात नहीं है। मेरा विचार तो यह है कि वेदों में विज्ञान की ऐसी बातें भी हैं, जिनका पता आज के वैज्ञानिकों को भी नहीं चला है।'' आज भारतीय जनमानस चाहे वेदों के प्रति कितनी ही श्रद्धा रखता हो, चाहे उन्हें ईश्वरीय ज्ञान मानता हो, लेकिन उसमें वैज्ञानिक तत्व भी हैं, यह स्वीकार सबके लिए सहज नहीं होगा। श्रद्धालु जन उन्हें धर्मग्रन्थ मानते हैं और धर्म में विज्ञान का प्रवेश धार्मिक समुदाय के लिए सबसे बड़ा आश्चर्य होगा। यही स्थिति विज्ञानवादियों की होगी कि वेदों का विज्ञान से क्या सम्बन्ध? सच में महर्षि दयानन्द ने एक चमत्कार ही कर दिया है जो धर्म और विज्ञान को, जो विरोधी भूमिका में थे, एक दूसरे का पूरक बना दिया।

सच तो यह है कि जिस परमात्मा ने हमें वेदों का ज्ञान दिया, उसी ने इस सारे ब्रह्माण्ड की रचना की, तो उसका ज्ञान-विज्ञान के विरुद्ध कैसे हो सकता है? उसने वेदों के माध्यम से हमें संसार में रहने व इससे लाभ उठाने की शिक्षा ही तो दी है। संसार को भली-भांति जानना ही तो विज्ञान है। इस प्रकार वेद धर्म और विज्ञान दोनों के ही मूल स्रोत हैं, यही कारण है कि हमारे प्राचीन ऋषियों को विज्ञान की हर विद्या का पूरा ज्ञान था। उसी के भग्नावशेष आज संसार को चमत्कृत कर रहे हैं।

जीना है तो शास्त्रार्थ का बिगुल बजाओ!

डॉ. हरिदत्तजी शास्त्री, व्याकरणाचार्य, एकादशतीर्थ

गुरु विरजानन्दजी से अध्ययन करने के पश्चात् स्वामी दयानन्द जी गुरु के आदेश पर वैदिक धर्म का प्रचार करने लगे। धर्म के अन्दर की बुराइयों को दूर करने पर विशेष जोर देते थे। विरोधियों ने यत्र तत्र उनसे शास्त्रार्थ किया, पर उस बाल ब्रह्मचारी अद्वितीय विद्वान् के सामने सब पराजित हो गए। काशी शास्त्रार्थ अत्यन्त प्रसिद्ध है जहाँ पौराणिकों ने पराजित होकर गुण्डागर्दी की थी जिसकी कई निष्पक्ष विद्वानों ने भर्त्सना भी की थी। यहाँ पर महर्षि दयानन्द जी के कतिपय प्रसिद्ध शास्त्रार्थों के विवरण दिए जाते हैं -

1. सन् 1866 में अजमेर में पादरी ग्रे, रोबसन और शूलब्रेड के साथ ईश्वर, जीव पर शास्त्रार्थ हुआ था। मिश्नरियों ने वहां एक संस्कृत वाक्य प्रस्तुत किया और कहा कि यह वेद मन्त्र है। महर्षि दयानन्द जी के बार-बार ललकारने पर भी वे लोग वेदों में उसे प्रदर्शित न कर सके।

2. सन् 1867 में अनूप शहर के पं. अम्बादत्त के साथ 'कर्णवास' में, पं. कृष्णानन्द के साथ रामघाट; पं. हीरावल्लभ के साथ ''कर्णवास'', पं. अंगद शास्त्री से 'सोरों' मे शास्त्रार्थ हुआ।

3. सन् 1868 अक्टूबर में पं. उमादत्त के साथ शास्त्रार्थ 'काकोरी के मेले में हुआ था। पं. श्री गोपाल के साथ फर्रुखाबाद में शास्त्रार्थ हुआ था।

4. 19 जून सन् 1869 में पं. हलधर ओझा से फर्रुखाबाद में प्रसिद्ध शास्त्रार्थ हुआ था। कन्नौज में पं. हरिशंकर से शास्त्रार्थ हुआ था।

5. 31 जुलाई 1869 ई. में कानपुर में पुनः पं. हलधर ओझा से शास्त्रार्थ हुआ था।

6. काशी का प्रसिद्ध शास्त्रार्थ :- 16 नवम्बर सन् 1869 में पं. ताराचरण तर्करत्न, स्वामी विशुद्धानन्द, पं. बाल शास्त्री, पं. राजाराम शास्त्री, पं. वामनाचार्य, पं. शिवसहाय, पं. माधवाचार्य, पं. देवदत्त शर्मा, पं. चन्द्रसिंह त्रिपाठी, पं. जयनारायण तर्कवाचस्पति, पं. राधामोहन तर्कवागीश, पं. काशी प्रसाद शिरोमणि, पं. नवीन नारायण तर्कालंकार, पं. हरिकृष्ण व्यास, पं. मदनमोहन शिरोमणि, पं. कैलाशाचार्य शिरोमणि, पं. मेषकृष्ण वेदान्ती, पं. गणेश श्रोत्रिय और महर्षि दयानन्दजी सरस्वती के मध्य प्रसिद्ध शास्त्रार्थ 'मूर्तिपूजा' पर हुआ।

जब शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ तो महर्षि दयानन्दजी ने पं. ताराचरण को मूर्तिपूजा के समर्थन में कोई वेद-मन्त्र प्रस्तुत करने को कहा। पं. ताराचरणजी के असफल होने पर, बाबू प्रमोददास मित्र ने अन्य विषय पर शास्त्रार्थ के लिए कहा। महर्षि दयानन्दजी ने 'धर्म' का लक्षण पूछा। इस पर पं. बाल शास्त्री ने अपनी बनाई एक पंक्ति सुनाई। इस पर पं. शिवसहाय ने आकर मनु के श्लोक को सुनाया-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेय शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।

महर्षि दयानन्दजी ने 'अधर्म' की परिभाषा पूछी, परन्तु कोई उत्तर न मिला। पं. बालशास्त्री को इसका उत्तर कुछ भी नहीं सूझा, इसलिए वे मौन हो गए। इसके पश्चात्, पुराण, प्रतिमा शब्द पर शास्त्रार्थ हुआ और सभी पण्डितों के पांव उखड़ गए। पण्डितों ने कूटनीति का प्रयोग किया; पर तत्कालीन पत्रों ने निष्पक्ष भाव से महर्षि दयानन्दजी को विजयी बतलाया।

कलकत्ते का प्रसिद्ध पत्र 'हिन्दू पैट्रीयट' 17 जनवरी,

सन 1870 के अंक में लिखता है-''सभा में दयानन्द के साथ पण्डितों का बहुत देर तक वाक्-युद्ध होता रहा। शास्त्र के सम्बन्ध में पण्डितों की तीक्ष्ण दृष्टि होने पर भी वे लोग निःसन्देह दयानन्दजी से पराजित हो गए थे।''

'तत्वबोधिनी– पत्रिका, कलकत्ता (असौज 1791 शालिवाहन संवत्) लिखती है-''वेदवेत्ता पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती ने उस समय काशी में जाकर घोषणा की कि वेदों में मूर्ति-पूजा नहीं है। इस पर काशी के तथा अन्य स्थानों के पण्डितों की महती सभा हुई, परन्तु किसी पण्डित ने भी वेदों से मूर्ति-पूजा के समर्थन में वेदमन्त्र प्रस्तुत नहीं किया।

'रोहिलखण्ड अखबार'-(नवम्बर, 1869 ई0) लिखता है- दयानन्द सरस्वती स्वामी ने बनारस के पण्डितों पर विजय प्राप्त की और बनारस के पण्डितों ने मिथ्या रूप से प्रचार किया कि वे विजयी हुए।

'प्रत्लकम्रमनन्दिनी'– इस पत्रिका के सम्पादक पं. सत्यव्रतजी सामश्रमी भी शास्त्रार्थ में सम्मिलित हुए थे। उन्होंने दिसम्बर 1869 ई. के अंक में शास्त्रार्थ का विवरण देते हुए स्वामी दयानन्दजी की विजय मुद्रित की थी।

'क्रिश्चियन इन्टैलिजैन्सर'-(मार्च 1870 ई.) में शास्त्रार्थ में उपस्थित श्री ए. एफ. आर. एच ने उसका विवरण लिखा है -'जब मैं नवम्बर मास में काशी वापस आया तो मेरा उनसे साक्षात्कार हुआ। भरतपुर के महाराज के साथ मैं उनसे मिलने गया।'' यह सुनकर विशुद्धानन्द प्रभृति-पंडितवर्ग बोले कि समस्त वेद उन सबके ही कण्ठस्थ हैं, तब दयानन्द ने कई प्रश्न किए, किन्तु वे दयानन्द के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सके।''

''ज्ञान-प्रदामिनी''– पत्रिका, लाहौर चैत्र सं. 1926 वि. में मुद्रित हुआ था-''इसमें सन्देह नहीं कि पण्डित लोग मूर्ति पूजा की आज्ञा वेदों में नहीं दिखा सके।''

पौराणिक पण्डित श्री कृष्णमणि त्रिपाठी– व्याकरण-साहित्य सांख्य योगाचार्य, एम. ए. का भ्रमः- आपने ''पुराण तत्वमीमांसा'' नामक 642 पृष्ठ का एक ग्रन्थ लिखा है जो सन् 1961 ई. में हिन्दी प्रचारक मण्डल, लखनऊ से प्रकाशित हुआ है। इसके पृष्ठ 634 से 637 तक में 'काशी शास्त्रार्थ' को तोड़ मरोड़ कर प्रकाशित किया गया है जिसमें स्वामी दयानन्दजी की पराजय लिखी है। उस समय के समाचारपत्रों ने स्वामी दयानन्द जी को स्पष्ट विजयी बतलाया है। उपर्युक्त प्रमाणों से यह स्पष्ट प्रकट होता है। अतः त्रिपाठी जी ने अपने ग्रन्थ में भ्रमपूर्ण बात लिखी है।

7. सन् 1872 ई. में मिर्जापुर पं. गोविन्द भट्ट व पं. जयश्री के साथ शास्त्रार्थ हुआ।

8. सन् 1872 ई. में ही डूमरांव में पं. दुर्गादत्त और आरा में पं. रुद्रदत्त व पं. चन्द्रदत्तजी से शास्त्रार्थ हुआ।

9. सितम्बर 1872 ई. में पटने में पं. रामजीवनभट्ट, पं. रामावतार से तथा कलकत्ते में पं. हेमचन्द्र चक्रवर्ती से शास्त्रार्थ हुआ।

10. 23 मार्च सन् 1873 ई. में कलकत्ते में पं. महेशचन्द्र 'न्यायरत्न' से शास्त्रार्थ हुआ।

11. 8 अप्रैल सन् 1873 ई. में हुगली मे पं. ताराचरण तर्करत्न से मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ पं. भूदेव मुखोपाध्याय के मध्यस्थ में हुआ। उस शास्त्रार्थ में वे बुरी तरह पराजित हुए।

12. 18 नवम्बर सन् 1873 ई. मे लखनऊ में पं. गंगाधर से शास्त्रार्थ हुआ

13. 25 मई सन् 1873 ई. में छपरे में पं. जगन्नाथ से शास्त्रार्थ हुआ।

14. अक्टूबर 1873 में कानुपर में पं गंगाधर से शास्त्रार्थ हुआ।

15. फरवरी 1874 ई. इलाहाबाद में पं. काशीनाथ शास्त्री से शास्त्रार्थ हुआ।

16. 25 नवम्बर सन् 1874 ई. में सूरत में इच्छाराम शास्त्री, भरौंच में पं. माधवराव, राजकोट में पं. महीधर से

शास्त्रार्थ हुआ।

17. 10 मार्च सन् 1875 ई. में बम्बई में पं. खेमजी बालजीजोशी से शास्त्रार्थ हुआ।

18. जून 1875 में ई. बम्बई में पं. कमलनैन आचार्य, बड़ौदा में पं. यज्ञेश्वर, व पं. अप्पाशम्भू से शास्त्रार्थ हुआ।

19. 27 जून, सन् 1876 ई. में बम्बई में पं. रामलाल से शास्त्रार्थ हुआ।

20. नवम्बर 1876 ई. मुरादाबाद में पादरी पारकर से शास्त्रार्थ हुआ।

21. 20 मार्च सन् 1877 ई. मे चाँदापुर मेला में पादरी स्काट व मौलवी मुहम्मद कासिम से प्रसिद्ध शास्त्रार्थ हुआ।

22. 24 सितम्बर सन् 1877 ई. में जालन्धर में मौलवी अहमदहसन से शास्त्रार्थ हुआ।

23. फरवरी 1878 ई. में गुजरांवाला में क्रिश्चियन मिशनरी से शास्त्रार्थ हुआ।

24. 28 नवम्बर सन् 1878 में अजमेर में पादरी ग्रे से शास्त्रार्थ हुआ।

25. 4 अगस्त सन् 1878 ई. में बदायूं में पं. रामप्रसाद से शास्त्रार्थ हुआ।

26. 25 अगस्त सन् 1879 में बरेली में पादरी स्काट से शास्त्रार्थ हुआ।

27. 28 जून सन् 1881 ई. में व्यावर में पादरी शूलब्रेड से शास्त्रार्थ हुआ।

28. 11 सितम्बर सन 1882 ई. उदयपुर में ौलवी अब्दुल रहमान से शास्त्रार्थ हुआ।।

इस प्रकार महर्षि दयानन्दजी सरस्वती ने 1866 ई. में क्रिश्चियन मिश्नरी से सर्वप्रथम और सन् 1883 ई. में उदयपुर में मुस्लिम मौलवी से अन्तिम शास्त्रार्थ किया था। शास्त्रार्थ में महर्षि दयानन्दजी इतने दक्ष थे कि विरोधियों के दांत खट्टे हो जाते थे।

महर्षि दयानन्दजी के पश्चात् स्वामी दर्शनानन्दजी, स्वामी नित्यानन्द जी, पं. गणपति शर्मा, प. रामचन्द्र देहलवी, आर्य प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी हुए। आर्यसमाज के लिए शास्त्रार्थी होना अनिवार्य है। यह कार्य बन्द नहीं होना चाहिए अन्यथा आर्यसमाज एकदम निर्बल हो जाएगा।

जब काशी के पंडितों ने पत्नी को बेचना बताया था वैध

वाराणसी। यह बात शायद ही किसी को पता हो कि 200 वर्ष पहले स्त्री वस्तु है या नहीं, इसका फैसला बनारस के पण्डितों की सलाह पर हुआ था। पण्डितों ने शास्त्रों के हवाले से स्त्री को वस्तु मानने की राय दी और मामले की सुनवाई कर रहे तत्कालीन अंग्रेज न्यायाधीशों ने स्त्री को वस्तु के रूप में स्वीकार करने पर मुहर लगा दी थी। यह दिलचस्प खुलासा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश डॉ. बी. एस चौहान ने शनिवार को किया।

महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ में मानवाधिकार एवं शिक्षा विषयक सेमिनार में वह मुख्य अतिथि थे। डॉ. चौहान ने बताया कि भारतीय समाज में पहले महिलाएं कमोडिटी (वस्तु) मानी जाती थी। अंग्रेज हुकूमत में एक मां ने दामाद को अपनी बेटी को 15 रुपये में बेचने का आरोप लगाते हुए कोर्ट में इसे चुनौती दी थी। महिला कमोडिटी है या नहीं, इस पर विचार के लिए पहले मामला सिंगल जज के पास गया तो वह कोई निर्णय नहीं दे पाए। फिर इसे तीन जजों के बेंच के पास भेजा गया। जजों को जब इस पर कोई उपाय नहीं सूझा तो उन्होंने बनारस के पंडितों की राय ली। पंडितों ने शास्त्रों के आधार पर पत्नी बेचे जाने को वैध ठहराया। उन्होंने बताया कि फैसले की यह कॉपी इलाहाबाद उच्च न्यायालय के 'आर्कइव' में है। ❑❑

लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

राजेन्द्र 'जिज्ञासु' वेद सदन, अबोहर-152116

बीसवीं शताब्दी में भारत भूमि ने दो विलक्षण बलिदानी दृढ़ व्रती संन्यासियों को जन्म दिया। दोनों ने अपनी सेवा, तप, त्याग तथा लहू की धार से इस धरा को सींच दिया। दोनों ही प्राणों के निर्मोही तथा शूरता की शान थे। एक थे श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज़ तथा दूसरे थे महाबलि लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी महाराज। गतिमान व्यक्तित्व के ये महात्मा देश व मानव समाज की महान विभूतियाँ थीं। दोनों ने लोकहित में सर्वस्व वार दिया।

घर में जोगी का सम्मान :- स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का जन्म पौष मास की पूर्णमासी को लुधियाना जिला के मोही ग्राम में एक प्रतिष्ठित सिख जाट कुल में हुआ था। आपका 135वाँ जन्म दिवस 22 जनवरी 2012 को मोही ग्राम में सोत्साह श्रद्धापूर्वक मनाया जायेगा। प्रायः कहा जाता है :-

'घर का जोगी जोगना बाहर का जोगी सिद्ध' स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज एक ऐसे जोगी थे, जो घर में भी सिद्ध थे और बाहर भी सर्वत्र प्रसिद्ध थे। इसका एक उदाहरण आगे दिया जाता है। विरक्त शिरोमणि स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी कुल व ग्राम के मोह बन्धन के सब तार तोड़ चुके थे परन्तु उनके जन्म स्थल मोही ग्राम तथा ननिहाल लताला निवासी अपनी उलझी समस्याओं को सुलझाने के लिये जब जब आपको बुलाते रहे, आप लोक-कल्याण के लिये वहाँ पहुँच जाया करते थे।

हमारा स्वामी तुम्हारा सरदार - यह सन् 1939 की घटना है। हैदराबाद का आर्य सत्याग्रह प्रचण्ड रूप धारण कर चुका था। देश में घर-घर, गली-गली, ग्राम ग्राम, नगर-नगर और डगर-डगर सत्याग्रह की चर्चा सुनाई देती थी। एक व्यक्ति मोही अथवा लताला जाने के लिये लुधियाना से रायकोट की बस पर बैठा। बस में यात्री लोग आर्य सत्याग्रह की चर्चा कर रहे थे। बस में चढ़े उपरोक्त यात्री की वेशभूषा से सब यात्री समझ गये कि यह कोई आर्योपदेशक ही हो सकता है।

किसी ने पूछा, "क्या आप आर्यसमाजी है?" "हाँ मैं आर्यसमाजी हूँ।" यात्री ने उत्तर दिया। तब एक यात्री ने जो मोही ग्राम अथवा आसपास का कोई सिख जाट था उस आर्य विद्वान् से पूछा, "की तैनू पता तुहाडा सत्याग्रह कौन चला रहिया है? अर्थात् क्या तुझे पता है कि आर्यसमाज का- आपका सत्याग्रह कौन चला रहा है?

यात्री प्रश्नकर्त्ता का भाव तो समझ ही गया परन्तु उसने कहा, "आप ही बता दें कि कौन चला रहा है?"

इस पर वह सिख जाट बोला, "तुहाडा सत्याग्रह साडा स्वामी चला रहिया है।" अर्थात् आपका सत्याग्रह हमारा स्वामी चला रहा है। तुम्हारा सेनापति मोही जन्मा जरनैल केहर सिंह (स्वामी जी का पूर्वनाम) हमारी धरती की देन है। ऐसा कहते समय उस सिख की छाती अभिमान से फूल रही थी। और उसकी गौरवोक्ति सुनकर वह आर्य विद्वान् भी इतराने लगा।

हमारे पाठक उस आर्य विद्वान् का नाम जानने को उत्सुक होंगे। वह थे श्री पं. रामचन्द्र जी (श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज)। यह संस्मरण स्वयं श्री स्वामीजी ने ही मुझे सुनाया था।

भगतसिंह के लिये दहाड़ :- आजन्म ब्रह्मचारी स्वतन्त्रानन्द जी का जीवन प्रेरक घटनाओं से परिपूर्ण है। वीर भगतसिंह तथा उनके साथियों ने लाहौर के कारागार में अपनी मांगों के लिये भूख हड़ताल कर रखी थी। जनता में उनसे सहानुभूति दर्शाने के लिये लाहौर में एक सभा का आयोजन कांग्रेस को करना पड़ा। गांधी जी क्रान्तिकारियों की नीति रीति के घोर विरोधी थे। इस स्थिति में कांग्रेस की ऐसी सभा जो हिंसा के दोषियों के समर्थन में हो उसका अध्यक्ष कौन बने?

तब सब की दृष्टि शूरता की शान स्वामी स्वतन्त्रनन्द जी महाराज पर पड़ी। निर्भीक और निर्भीड़ स्वतन्त्रानन्द ने सहर्ष उस 'खतरनाक सभा' का प्रधान बनना स्वीकार किया। सब वक्ताओं ने घुमा फिरा कर अपनी बात कही। अब अध्यक्ष को बोलना था। कांग्रेस के मञ्च से पहली बार एक नई आवाज सुनी गई। स्वामी जी ने कहा, "सरकार हमारे राजनैतिक बन्दियों से वही व्यवहार करें जो एक सरकार दूसरी सरकार के P.O.W. (युद्ध बन्दियों) से किया करती है। यह नई मांग सुनकर के सभी कान खड़े हो गये।

हथकड़ी कहां से लाये सरकार? :- अगला रविवार आया। स्वामी जी महाराज टांगे में बैठकर आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग में जा रहे थे। पुलिस ने रास्ते में टांगे को रोककर स्वामी जी को गिरफ्तार कर लिया। पुलिस ने हथकड़ी लगानी चाही। महाराज ने अपनी हाथी की सूण्ड के समान भुजाओं को आगे कर दिया। पुलिस ने हथकड़ी आगे की। महाराज की बलिष्ठ भुजाओं को वह हथकड़ी फिट नहीं आई। सरकार के पास बाल ब्रह्मचारी के माप की कोई हथकड़ी ही नहीं थी। पग पग पर मुनिवर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने इतिहास रचा।

एक और दोष लगाया गया :- हमारे पूज्य स्वामी जी पर एक और दोष लगाया गया। वह वीर भगतसिंह, राजगुरु व सुखदेव के अपराध से कोई कम नहीं था। पंजाब के अंग्रेज गवर्नर की हत्या का षड्यन्त्र रचने को दोष पूज्य स्वामी जी पर लगाया गया। भीमकाय ब्रह्मचारी को जब कोतवाली ले जाया गया तो अनेक देशभक्त व समाज सेवी कोतवाली पहुँच गये। कुछ एक को ही आपसे मिलने की सरकार ने अनुमति दी। ऐसे व्यक्तियों में एक श्री पं. रामचन्द्र जी थे। स्वामी जी ने एक प्रश्न के उत्तर में मुझे बताया कि जब मैं हवालात में नन्द स्वामी जी से भेंट करने गया तो आप जंगले के पीछे उस छोटे से कमरे में ऐसे विचरण कर रहे थे जैसे केहरी अपने पिंजरे में झूमता हुआ इधर उधर होता है।

न्यायाधीश का भक्तिभाव :- एक सिख न्यायाधीश के सामने महाराज का केस आया। वह बड़ा पक्का देशभक्त था। उसकी पत्नी बड़ी धर्मात्मा थी। पुलिस ने स्वामी जी को कठोर दण्ड दिलवाने के लिये जो करना था, सो किया परन्तु न्यायाधीश केस का निर्णय लटकाता गया। पता चला कि न्यायाधीश देशभक्त साधु को दण्डित नहीं करना चाहता। उसकी पत्नी ने भी उसे कहा, "स्वामी जी कोई डाकू या हत्यारे तो हैं नहीं। हम बाल बच्चे वाले हैं। ऐसे पुण्यात्मा महात्मा को दण्ड नहीं देना। यह कलंक हम पर न लगे। सरकार को अन्ततः स्वामीजी को छोड़ना ही पड़ा।

कई बार भूखे रहे :- महाराज का नियम था कि वे दिन में एक ही बार भोजन किया करते थे। उनका भोजन का एक नियत समय था। बारह बजे भोजन लिया करते थे। यदि बारह बजकर पाँच मिनट पर भोजन नहीं पहुँचा तो फिर अगले दिन ही भोजन

किया करते थे। अपने इस नियम की कड़ाई से पालन करने के कारण आपको कई बार भूखे रहना पड़ा। तीन-तीन दिन तक तो कई बार भूखे रहे। मुझे चार दिन तक भूखे रहने की भी दो घटनायें मिलीं। भले ही भूखे रहना पड़ा परन्तु प्रचार, उपदेश तथा अन्य सब कार्य यथा पूर्व किया करते थे। कभी व्यवस्था करने वालों को दोष नहीं दिया। किसी पर भी क्रुद्धित नहीं हुए और न ही इस कारण किसी को कभी कोसा।

जब कालका में भूखे रहे :- यह देश विभाजन के बाद की घटना है। आर्यसमाज कालका (हिमाचल प्रदेश) के उत्सव पर आपको आमन्त्रित किया गया। भोजन करने के लिये बारह बजे तक कोई नहीं आया। जिसके यहाँ भोजन था वह देर से पहुँचा। श्री स्वामीजी भूखे रहे। अगले दिन फिर ऐसा ही हुआ। महाराज उपदेश व्याख्यान तो देते रहे।

तीसरे दिन श्री पं. शिवकुमार जी शास्त्री तथा श्री पं. ओम् प्रकाश जी वर्मा बहुत चौकस रहे। इन्हें लगा कि हम तो अल्पाहार भी करते हैं और हमारे पूजनीय महात्मा दो दिन से भूखे हैं। तीसरे दिन बारह बजने से कुछ पहले ही ये दोनों भागे भागे आर्यसमाज के पास हलवाई की दुकान से उसकी बाल्टी में चार पाँच सैर दूध जो पड़ा था सो उठा लाये और कुछ मिठाइयाँ भी ले आये। स्वामीजी से कहा, यह स्वीकार करें। इतने में भोजन लेकर समाज का एक व्यक्ति आ गया। भक्तराज अमीचन्द के शब्दों में कहूँगा :-

अमीचन्द ऐसा होना कठिन है

पर्वत आता दीखता था :- कर्नाटक के मैंगलूर जिला के एक व्यक्ति ने श्री स्वामीजी को सोलापुर में देखा था। उसने श्री स्वामी ब्रह्मदेव जी से कहा था, स्वामीजी को दूर से आते देख कर ऐसा लगता था कि मनुष्य नहीं कोई पर्वत सरकता हुआ आ रहा है। उनका भव्य भाल और विशाल काया देखकर लोग तृप्त हो जाया करते थे।

ऐसा वेदानुरागी ईश्वर भक्त :- जब सेना में विद्रोह फैलाने के आरोप में भारत छोड़ो आन्दोलन में दीनानगर से बन्दी बनाये गये तब अपने साथ न तो कोई वस्त्र लिये और न कोई अन्य वस्तु। शाही किला में भी जेल के वस्त्र ग्रहण नहीं किये। जाते समय केवल एक ही वस्तु साथ लेकर चल पड़े। उनके झोले में सदा वेद रहता था। वेद की एक संहिता लेकर मुनि अपनी कुटिया से चल पड़े। वेद के स्वाध्याय में कभी भी प्रमाद नहीं किया।

अभिमान शून्य महात्मा :- स्वामी जी सर्वथा अभिमान शून्य महापुरुष थे। एक बार मेरठ जनपद के ग्रामों में वेद प्रचार के लिये विचरण कर रहे थे। न जाने साधु के मन में क्या मौज आई। बिन बुलाय अपने आप अपने प्रिय शिष्य पं. पूर्णचन्द्र (स्वामी पूर्णानन्द जी महाराज) के निवास पर पहुँच गये। शिष्य महान् गुरु को अपने द्वार पर खड़ा पाकर गद्गद हो गया।

ऐसे ही एक बार पं. रामचन्द्र जी के जन्म स्थान पर विचरण करते हुए पहुँच गये। रामचन्द्र तो तब इनके पास दीनानगर ही रहा करते थे पता नहीं उनके जन्म स्थान की फेरी का विचार मन में कैसे आया। यह सब उनकी महानता ही तो थी।

उनका एक सन्देश :- "आर्यो! हमें पेट के बल रींग-रींग कर चलना पड़े अथवा हमारा रोम रोम नोच लिया जावे परन्तु हम ऋषि के ऋण से कदापि अनृण नहीं हो सकते।" क्या आर्यसमाज की युवा पीढ़ी इस सन्देश के मर्म को समझकर महाराज की भावना को अंगीकार करेगी?

□□

ईसाई मत का खोखलापन

(पण्डित शांतिप्रकाश "शास्त्रार्थ-महारथी")

ऋषि दयानन्द के मत में अपने पराये का भेद केवल सैद्धान्तिक है। जो कोई भी किसी वैदिक सिद्धान्त को मानता और उसकी जितनी पुष्टि करता है वह उतना ही अपना और निकटस्थ है।

और जो कोई वैदिक सिद्धान्त से जितना दूर है, वह उतना ही दूरस्थ और पराया है। ऋषिराज ने इस 13वें समुल्लास की अनुभूमिका के अन्त में लिखा है कि-

"जो-जो सर्वमान्य सत्य विषय हैं, वे तो सबमें एकसे हैं, झगड़ा झूठे विषयों में होता है। अथवा एक सच्चा और एक झूठा हो तो भी कुछ थोड़ा सा विवाद चलता है। यदि वादी प्रतिवादी सत्यासत्य निश्चय के लिए वाद प्रतिवाद करें तो अवश्य निश्चय हो जाय।"

बड़ा सत्यार्थप्रकाश समु. 13पृ. 441

इसी निश्चय के उद्देश्य से ही इस समुल्लास के लिखने की आवश्यकता प्रतीत हुई। बाईबल का पूर्व भाग यहुदी तथा ईसाई दोनों मानते हैं। अन्तिम भाग इंजीलों के नाम से प्रसिद्ध है और पहिले की अपेक्षा छोटा है, इसे केवल ईसाई लोग मानते हैं। यहूदी नहीं मानते।

सम्प्रदायवाद महाभारत काल के पश्चात् चला है। सबसे पहिला मत जो वेदों की शिक्षा के लुप्त तथा अर्द्ध लुप्त होने पर चला, यह पारसी मत है। जिसे जरदुश्त ने स्थापित किया, इसका समय लगभग 45 सौ वर्ष पूर्व का है। यहूद- मत का काल 3500 वर्ष पूर्व तथा ईसाई मत दो सहस्र वर्ष के अन्तर्गत है। इसलाम का क्रम इसके 600 वर्ष पश्चात् का है। इन सब मतों में काल की दूरी के साथ-साथ क्रमशः वैदिक मन्तव्यों से दूरी होती चली गई किन्तु अन्वेषण करने पर प्रत्येक मत का मूलाधार वैदिक धर्म ही सिद्ध होता है।

सभी मतों में एक ऐसी उच्च दशा के काल का वर्ण है जिसमें सर्वथा सच्चाई का प्रकाश ईश्वर की ओर से हुआ। उस युग के लोग धर्मात्मा थे। उसे स्वर्णिम युग कहा गया है जब कि विवाद न उठता था। उठता तो धर्म ग्रंथ के आधार पर समाप्त हो जाता था। तब मनुष्य जाति में कोई जन्म, संप्रदाय, भाषा, रंग रूप-मूलक भेदभाव न था। यही वैदिक युग है जिसकी रूप-रेखा सैमेटिक मतों में भूली सी प्रतीत होती है। क्योंकि उस समय वेदों के सच्चे अर्थ लुप्तप्रायः थे। अलंकारों की व्याख्या बिगड़ गई थी, आख्यान गढ़-गढ़ कर वेदों के रूपक बिगाड़ लिये गए थे। धर्म का स्वरूप विकृत होकर विस्मृति पथ को प्राप्त हो चुका था। इसका निदर्शन बाईबल की तौरात वर्णित कथाओं से भली भाँति हो पाता है। देखिये तौरात के प्रथम पृष्ठ पर लिखा है कि-

"आरम्भ में ईश्वर ने आकाश और पृथिवी को सृजा और पृथिवी बेडोल तथा सूनी है। और महिराव पर अंधियारा था और ईश्वर का आत्मा जल के ऊपर डोलता था।" पर्व 1 आयत 1-2।।

दार्शनिक दृष्टि से ईश्वर का आत्मा कहना सर्वथा अनुपयुक्त है किन्तु बाईबल में दर्शन शास्त्र और तर्क को निषिद्ध घोषित किया है। ईश्वर का आत्मा कहने से वह शरीरी प्रतीत होता है जैसे मनुष्य का आत्मा कहने से शरीर सहित आत्मा अभिप्रेत है। आगे के वर्णन में ईश्वर के शारीरिक अवयवों का स्पष्ट वर्णन है। उसकी आत्मा पानी पर डोलती थी तो वह एकदेशी सिद्ध हुआ। सर्व व्यापक न होने से वह सृष्टिकर्ता सिद्ध नहीं हो सकता। अपूर्ण का वचन भी अपूर्ण होने से बाईबल सम्भ्रान्त पुस्तकों की श्रेणी में नहीं आने से बुद्धिमानों के लिए प्रमाण नहीं।

वास्तव में यहाँ जल शब्द का भाव वेद के "सलिल" और "आपः" आदि शब्दों से लिया गया प्रतीत होता है

जो कि प्रकृति वाची शब्द है क्योंकि ऋग्वेद में प्रलयावस्था का चित्रण करते हुए लिखा है कि-

तम आसीत्तमसा गूढ़मग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।

तुच्छयेनावपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिनाजायतैकम्!।।

ऋ. 10/129/3

यह सब जगत् सृष्टि के पूर्व अन्धकार से आवृत्त, रात्रि रूप में जानने के अयोग्य आकाश रूप सब जगत् तथा तुच्छ, अनन्त परमेश्वर के सम्मुख एकदेशी आच्छादित था। पश्चात् परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य से कारण रूप से कार्यरूप में परिणत कर दिया।

इस मंत्र में सलिल शब्द के अर्थ प्रकृति के हैं जो एक प्रकार से अपने कारण रूप में प्रलयावस्था के कारण अन्धकारमय थी, तौरात में गहराव और अन्धेरे का वर्णन है जिसे स्पष्ट सिद्ध होता है कि तौरात का रचयिता इस मंत्र के उस समय के अपभ्रष्ट अर्थों को कहना चाह रहा है। सलिल शब्द के अनेक अर्थों में से एक अर्थ जल भी लोक में प्रसिद्ध है। अतः यहाँ प्रकृति में ईश्वर को व्यापक न लिख कर अपभ्रंश अर्थों के अनुसार उसकी आत्मा की कल्पना करके उसे पानी पर डोलता हुआ वर्णित किया है। सृष्टि रचना क्रम में भी उपनिषद् की अधूरी और मिथ्या नकल की है। यह वचन निम्न प्रकार से है-

तस्माद्वा एतस्मादात्मनः आकाशः संभूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। यः पृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। औषधिभ्योऽन्नम्। अभाद्रेतः रेतसः पुरुषः। स बा एष परुषोऽन्नरसमयः। तैतिरीयोपनिषत् ब्रह्मानन्द वल्ली अनुवाक।1

उस परमेश्वर और प्रकृति से आकाश अवकाश अर्थात् जो कारण रूप द्रव्य सर्वत्र फैल रहा था उसको इकट्ठा करने से अवकाश उत्पन्न सा होता है। वास्तव में आकाश की उत्पत्ति नहीं होती क्योंकि बिना आकाश के प्रकृति और परमाणु कहाँ ठहर सकें? आकाश के पश्चात् वायु, वायु के पश्चात् अग्नि, अग्नि के पश्चात् जल, जल के पश्चात् पृथिवी, पृथिवी से औषधि, औषधियों से अन्न, अन्न से वीर्य, उससे पुरुष अर्थात् शरीर उत्पन्न होता है। आकाश नित्य है, प्रलयावस्था में उसका अभाव व्यवहार के अभाव के कारण माना गया है। आकाश की उत्पत्ति नहीं होती। व्यवहारावस्था में उपचार से प्रगट होना व्यंजित हुआ है, यह पूर्ण प्रलय के पश्चात् उत्पत्ति का वर्णन है। तौरात के कर्ता इसकी वास्तविकता तक नहीं पहुँच सके। जिन्होंने आकाश की उत्पत्ति का वर्णन कर दिया। उत्पत्ति क्रम भी विचित्र रखा। सूर्य चौथे दिन और वनस्पति जगत् का तीसरे दिन उत्पन्न होना लिखा। यह वर्णन विज्ञान के सर्वथा विरुद्ध है क्योंकि वनस्पति जगत् सूर्य ताप के बिना उद्भूत नहीं हो सकता। सूर्य के बिना उसकी उत्पत्ति से पूर्व तीन दिनों की गणना भी असंभव है।

तौरात ने 6 दिन में सृष्टि की रचना की पूर्णता कर दी। सातवें दिन ईश्वर जी को आराम का समय नियत करके संसार को उस दिन छुट्टी मनाने का आदेश दिया। अवज्ञा पर मृत्यु दंड की घोषणा की और लिखा कि सातवें दिन खुदा के छुट्टी मनाने के कारण आग भी जलाई जाए। किन्तु सारे ईसाई इस आदेश की अवज्ञा करने से मृत्यु दंड के अधिकारी सिद्ध होते हैं। न होगा बांस न बजेगी बांसुरी। यदि बाईबल की शिक्षा पर ईसाई सरकारें आचरण करें तो संसार में कोई भी ईसाई मृत्युदंड से मुक्त न हो सकेगा। यह बाईबल की दर्शन हीनता का ज्वलन्त प्रमाण है।

उपनिषद् ने पुरुष की उत्पत्ति तक का वैज्ञानिक क्रम रखा है। पुरुष को अन्न-रस-मय माना है किन्तु बाईबल उसे केवल मिट्टी से मानकर खुदा के हाथों की घड़न्त कहती है।

वैदिक ग्रन्थ स्त्री पुरुषों की उत्पत्ति का वर्णन करते हैं। बाईबल स्त्री की उत्पत्ति पुरुष से मान कर असंभव प्रमाण की कोटि में अमान्य सिद्ध होती है। वेद में पृथिवी के ऊँचे देश पर उत्पत्ति की सम्भावना प्रदर्शित की है और उसका नाम स्वर्गलोक रखा है। बाईबल इस रहस्य से वंचित होकर आकश से कल्पित स्वर्ग की भूल-भूलैय्यों में

व्यस्त है, जहाँ ईश्वर अपने साथियों समेत सैर करता हुआ अदम को ढूँढता और पुकारता है परन्तु वह नग्न होने के कारण वृक्षों की ओट में छिपा था। जिसे ईश्वर न देख सका, न जान सका।

वेद में बुद्धिवाद की पराकाष्ठा है। गायत्री मंत्र में बुद्धि के सुमार्ग गामी होने की प्रार्थना है किन्तु बाईबल में बुद्धि के फल को खाने का सर्वथा निषेध करके मनुष्य को अन्ध विश्वास के गहरे गर्त में गिरा दिया गया है।

बाईबल में शैतान की चर्चा वेद के इन्द्र और वृत्र के युद्ध अर्थात् सूर्य के बादलों पर प्रकार की कथा के वास्तविक रूपक को न समझने से हुई है। शैतान साँप बनकर स्वर्ग में प्रविष्ट हुआ। वेद में सूर्य की प्रखर किरणों के वज्रोपम प्रहार से जलकणों को छिपाए रखने वाला मेघरूपी असुर अपनी जलधाराओं के साथ पृथिवी पर गिर कर उसे हरा भरा बना देता है। जिससे सस्य श्यामला भूमि स्वर्ग कहलाने लगतीहै। वैदिक शब्द अहि के अर्थ मेघ अथवा बादल के हैं। तौरात के लेखक तक इसका लोकप्रसिद्ध अर्थ केवल साँप ही पहुँचा, जिसे उसने आदम को बहकाने के लिए खुदाई स्वर्ग में पहुँचा दिया। और शापरूप से उसे भूमि पर गिरा दिया गया तब आकाश में स्वर्गके प्रत्येक द्वार पर कृपाण पाणि फरिश्तों का पहरा लगा दिया और खुदा शैतान के हमले से सुरक्षित हो पाया।

स्पष्ट है इन कथानकों में वैदिक कथाओं के अपभ्रंश हुए भावों का अधूरा खाका खेंचने का प्रयत्न किया गया है। जिसमें न कोई सार है और किसी तत्व का यथार्थ दिग्दर्शन। ईसाई तथा यहूदी इस तथ्य को जितना शीघ्र समझ सकें; संसार का तथा उनका भला है।

सारी बाईबिल की दार्शनिक इतिश्री इतनी ही है। तैत्तिरीयोपनिषत् में आकाश क्रम से, छान्दोग्य में अग्न्यादि, ऐतरेय में जलादिक्रम से सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन है। जब महाप्रलय हो तो आकाशादि क्रम और जब खंड प्रलय हो तो अग्न्यादि क्रम से सृष्टि उत्पत्ति का वर्णन लिखा है। यदि बाईबिल के सृष्ट्युत्पत्ति के वर्णन को खंड प्रलय मानकर जल क्रम से उत्पत्ति के सिद्धान्त को स्वीकार किया जाए तो भी यह वर्णन उपयुक्त नहीं क्योंकि इसमें आकाशादि की उत्पत्ति भी लिखी है।

आदम की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए लिखा है कि:-

"और यहूदा परमेश्वर ने आदम को भूमि की मिट्टी से रचा और उसके नथनों में जीवन् का श्वास फूंक दिया। आदम जीता प्राणी हुआ।"

तौरात उत्पत्ति आयत 87

कुरान में लिखा है कि खुदा ने आदम को अपने दोनों हाथों से बनाया तथा स्थानान्तरण में लिखा है कि उसमें अपनी रूह फूंक दी। खुदा की रूह अथवा ईश्वर के जीव का अभिप्राय एक तो यह है कि ईश्वर ने अपनी ही आत्मा उसमें प्रविष्ट कर दी तो आदम को ईश्वर अथवा इसका अवतार मानना होगा। दूसरे अर्थ यह हो सकते हैं कि ईश्वर उस रूह अर्थात् जीव का स्वामी है। यही अर्थ ही संभव माने जा सकते है। विचारणीय बात यह है कि जीव भी ईश्वर की भांति अनादि है अथवा सादि है? यदि अनादि नहीं तो ईश्वर ने उसे कहाँ से उत्पन्न किया? बाईबिल और कुरान में ईश्वर की ओर से जीव को उत्पन्न किये जाने का कहीं भी वर्णन नहीं मिलता। अतः मानना होगा कि जीवात्मा अनादि है। यदि ईसाई यह स्वीकार कर लें तो उनके वैदिक धर्मी बनने में देर न लगे। पुनः वह त्रिनेटी के स्थान पर वैदिक त्रित्ववाद को मान्यता देंगे।

सृष्टि रचना प्रयोजन का वर्णन बाईबिल में अत्यन्त दूषित है। लिखा है कि परमात्मा ने सृष्टि अपने लिए बनाई। यदि ऐसा है तो ईश्वर सृष्टि रचने से पूर्व अधूरा था। किसी प्रकार की न्यूनता अनुभव कर रहा था अन्यथा उसे सृष्टि रचने की क्या आवश्यकता पड़ गई थी, उसने सृष्टि प्रथम बार रची तो उसे यह अनुभव कहाँ से प्राप्त हुआ। और यह इच्छा अकस्मात् क्यों और कैसे उत्पन्न हुई? यदि अनुभव था तो सष्टि-रचना कार्य प्रवाह से अनादि मानना होगा, जोकि वैदिक धर्म का सिद्धान्त है।

क्रमशः

सत्ता के हस्तांतरण की संधि

(रवि वर्मा)

आपने देखा होगा कि मैं बराबर सत्ता के हस्तांतरण के संधि के बारे में लिखता हूँ और आप बार बार सोचते होंगे कि आखिर ये क्या है? आज पढ़िए सत्ता के हस्तांतरण की संधि (Transfer of Power Agreement) यानि भारत के आजादी की संधि। ये इतनी खतरनाक संधि है कि अगर आप अंग्रेजों द्वारा सन् 1615 से लेकर 1857 तक किये गए सभी 565 संधियों या कहें साजिश को जोड़ देंगे तो उस से भी ज्यादा खतरनाक संधि है ये। 14 अगस्त 1947 की रात को जो कुछ हुआ है वो आजादी नहीं आई बल्कि ट्रान्सफर ऑफ़ पॉवर का एग्रीमेंट हुआ था पंडित नेहरू और लॉर्ड माउन्ट बेटन के बीच में। Transfer of Power और Independence ये दो अलग चीजे हैं। स्वतंत्रता और सत्ता का हस्तांतरण ये दो अलग चीजें है। और सत्ता का हस्तांतरण कैसे होता है? आप देखते होंगे कि एक पार्टी की सरकार है, वो चुनाव में हार जाये, दूसरी पार्टी की सरकार आती है तो दूसरी पार्टी का प्रधानमन्त्री जब शपथ ग्रहण करता है, तो वो शपथ ग्रहण करने के तुरंत बाद एक रजिस्टर पर हस्ताक्षर करता है, आप लोगों में से बहुतों ने देखाहोगा, तो जिस रजिस्टर पर आने वाला प्रधानमन्त्री हस्ताक्षर करता है उसी रजिस्टर को ट्रान्सफर ऑफ पॉवर बुक कहते हैं और उस पर हस्ताक्षर के बाद पुराना प्रधानमन्त्री नए प्रधानमन्त्री को सत्ता सौंप देता है। और पुराना प्रधानमंत्री निकल कर बाहर चला जाता है। यही नाटक हुआ था 14 अगस्त 1947 की रात को 12 बजे। लॉर्ड माउन्ट बेटन ने अपनी सत्ता पंडित नेहरु के हाथ में सौंपी थी, और हमने कह दिया कि स्वराज्य आ गया। कैसा स्वराज्य और काहे का स्वराज्य? अंग्रेजों के लिए स्वराज्य का मतलब क्या था? और हमारे लिए स्वराज्य का मतलब क्या था? ये भी समझ लीजिये। अंग्रेज कहते थे कि हमने स्वराज्य दिया, माने अंग्रेजों ने अपना राज तुमको सौंपा है ताकि तुम लोग कुछ दिन इसे चला लो जब जरूरत पड़ेगी तो हम दुबारा आ जायेंगे। ये अंग्रेजो का interpretation (व्याख्या) था। और हिन्दुस्तानी लोगों की व्याख्या क्या थी, हमने स्वराज्य ले लिया। और इस संधि के अनुसार ही भारत के दो टुकड़े किये गए और भारत और पाकिस्तान नामक दो Dominion States बनाये गये हैं। ये Dominion State का अर्थ हिंदी में होता है एक बड़े राज्य के अधीन एक छोटा राज्य, ये शब्दिक अर्थ है और भारत के सन्दर्भ में इसका असल अर्थ भी यही है। अंग्रेजी में इसका एक अर्थ है "One of the self governing nations in the British Commonwealth" और दूसरा "Dominance or power through legal authority"। Dominion State और Independent Nation में जमीन आसमान का अंतर होता है। मतलब सीधा है कि हम (भारत और पाकिस्तान) आज भी अंग्रेजों के अधीन/मातहत ही हैं। दुःख तो ये होता है कि उस समय के सत्ता के लालची लोगों ने बिना सोचे समझे या आप कह सकते हैं कि पूरे होशो हवास में इस संधि को मान लिया या कहें जानबूझकर ये सब स्वीकार कर लिया। और ये जो तथाकथित आज़ादी आयी, इसका कानून अंग्रेजों के संसद में बनाया गया और नाम रखा गया Indian Independence Act यानि भारत की स्वतंत्रता का कानून।

और ऐसे धोखाधड़ी से अगर इस देश की आजादी आई तो वो आजादी, आजादी है कहाँ? और इसीलिए गाँधी जी (महात्मा गाँधी) 14 अगस्त 1947 की रात को दिल्ली में नहीं आये थे। वो नोआखाली में थे। और काँग्रेस के बड़े नेता गाँधी जी ने मना कर दिया था। क्यों? गाँधी जी कहते थे कि मैं मानता नहीं कि कोई आजादी आ रही है। और गाँधी जी ने स्पष्ट कह दिया था कि ये आजादी नहीं आ रही है सत्ता के हस्तांतरण का समझौता हो रहा है। और गाँधी जी ने नोआखाली से प्रेस विज्ञप्ति जारी की थी। उस प्रेस स्टेटमेंट के पहले ही वाक्य में गाँधी जी ने ये कहा कि मैं हिन्दुस्तान के उन करोड़ों लोगों

को ये सन्देश देना चाहता हूँ कि ये जो तथाकथित आजादी (So Called Freedom) आ रही है ये मैं नहीं लाया। ये सत्ता के लालची लोग सत्ता के हस्तांतरण के चक्कर में फंस कर लाये हैं। मैं मानता नहीं कि इस देश में कोई आजादी आई है। और 14 अगस्त 1947 की रात को गाँधी जी दिल्ली में नहीं थे नोआखाली में थे। माने भारत की राजनीति का सबसे बड़ा पुरोधा जिसने हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई की नींव रखी हो वो आदमी 14 अगस्त 1947 की रात को दिल्ली में मौजूद नहीं था। क्यों? इसका अर्थ है कि गाँधी जी इससे सहमत नहीं थे। (नोआखाली के दंगे तो एक बहाना था असल बात तो ये सत्ता का हस्तांतरण ही था) और 14 अगस्त 1947 की रात को जो कुछ हुआ है वो आजादी नहीं आई.... ट्रान्सफर ऑफ़ पॉवर का एग्रीमैंट लागू हुआ था। पंडित नेहरु और अंग्रेजी सरकार के बीच में। अब शर्तों की बात करता हूँ, सबका जिक्र करना तो संभव नहीं है लेकिन कुछ महत्वपूर्ण शर्तों का जिक्र जरूर करूंगा जिसे एक आम भारतीय जानता है और उनसे परिचित हैं ....

1. इस संधि की शर्तों के मुताबिक हम आज भी अंग्रेजों के अधीन/मातहत ही हैं। वो एक शब्द आज सब सुनते हैं न Commonwealth Nations। अभी कुछ दिन पहले दिल्ली में Commonwealth Game हुए थे आप सब को याद होगा ही और उसी में बहुत बड़ा घोटाला भी हुआ है। ये Commonwealth का अर्थ होता है समान सम्पत्ति। आप जानते हैं ब्रिटेन की महारानी हमारे भारत की भी महारानी है और वह आज भी भारत की नागरिक हैं और हमारे जैसे 71 देशों की महारानी हैं वो।

Commonwealth में 71 देश हैं और इन सभी 71 देशों में जाने के लिए ब्रिटेन की महारानी को वीजा की जरूरत नहीं होती है क्योंकि वो अपने ही देश में जा रही है लेकिन भारत के प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति को ब्रिटेन में जाने के लिए वीजा की जरूरत होती है क्योंकि वो दूसरे देश में जा रहे हैं। मतलब इसका निकालें तो ये हुआ कि या तो ब्रिटेन की महारानी भारत की नागरिक है या फिर भारत आज भी ब्रिटेन का उपनिवेश है इसलिए ब्रिटेन की रानी को पासपोर्ट और वीजा की जरूरत नहीं होती है, अगर दोनों बाते सही है तो 15 अगस्त 1947 को हमारी आजादी की बात कही जाती है वो झूठ है। और Comonwealth Nations में हमारे एंट्री है वो एक Dominion State के रूप में है न कि Independent Nation के रूप में। इस देश में प्रोटोकॉल है कि जब भी नए राष्ट्रपति बनेंगे तो 21 तोपों की सलामी दी जाएगी उसके अलावा किसी को भी नहीं। लेकिन ब्रिटेन की महारानी आती है तो उनको भी 21 तोपों की सलामी दी जाती है, इसका क्या मतलब है? और पिछली बार ब्रिटेन की महारानी यहाँ आयी थी तो एक निमंत्रण पत्र छपा था और उस निमंत्रण पत्र में ऊपर जो नाम था वो ब्रिटेन की महारानी का था और उसके नीचे भारत के राष्ट्रपति का नाम था मतलब हमारे देश का राष्ट्रपति देश का प्रथम नागरिक नहीं है। ये है राजनीतिक गुलामी, हम कैसे मानें कि हम एक स्वतंत्र देश में रह रहे हैं। एक शब्द आप सुनते होंगे High Commission ये अंग्रेजों का एक गुलाम देश दूसरे गुलाम देश के यहाँ खोलता है लेकिन इसे Embassy नहीं कहा जाता। एक मानसिक गुलामी का उदाहरण भी देखिये... हमारे यहाँ के अखबारों में आप देखते होंगे कि कैसे शब्द प्रयोग होते हैं- (ब्रिटेन की महारानी नहीं) महारानी एलिज़ाबेथ, (ब्रिटेन के प्रिन्स चार्ल्स नहीं) प्रिन्स चार्ल्स, (ब्रिटेन की प्रिंसेस नहीं) प्रिंसेस डैना (अब तो वो है नहीं), अब तो एक और प्रिन्स विलियम भी आ गए हैं।

2. भारत का नाम INDIA रहेगा और सारी दुनिया में भारत का नाम इंडिया प्रचारित किया जायेगा और सारे सरकारी दस्तावेजों में इसे इंडिया के ही नाम से संबोधित किया जाएगा। हमारे और आपके लिए ये भारत है लेकिन दस्तावेजों में ये इंडिया है। संविधान के प्रस्तावना में ये लिखा गया है "India that is Bharat" जबकि होना ये चाहिए था "Bharat that was India" लेकिन दुर्भाग्य इस देश का कि ये भारत के जगह इंडिया हो गया। ये इसी संधि के शर्तों में से एक है। अब हम भारत के लोग जो इंडिया कहते हैं वो कहीं से भी भारत नहीं है। कुछ दिन पहले मैं एक लेख पढ़ रहा था अब किसका था याद नहीं आ रहा है उसमें उस व्यक्ति ने बताया था कि इंडिया का नाम बदल के भारत कर दिया जाये तो इस देश में

आश्चर्यजनक बदलाव आ जायेगा और ये विश्व की बड़ी शक्ति बन जायेगा अब उस शख्स के बात में कितनी सच्चाई है मैं नहीं जानता, लेकिन भारत जब तक भारत था तब तक तो दुनिया में सबसे आगे था और जब से इंडिया हुआ है तब से पीछे, पीछे और पीछे ही होता जा रहा है।

3. भारत के संसद में वन्दे मातरम नहीं गाया जायेगा अगले 50 वर्षों तक यानि 1997 तक। 1997 में पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर ने इस मुद्दे को संसद में उठाया तब जाकर पहली बार इस तथाकथित आजाद देश की संसद में वन्देमातरम गाया गया। 50 वर्षों तक नहीं गाया गया क्योंकि ये भी इसी संधि की शर्तों में से एक है। और वन्देमातरम को ले के मुसलमानों में जो भ्रम फैलाया गया वो अंग्रेजों के दिशानिर्देश पर ही हुआ था। इस गीत में कुछ भी ऐसा आपत्तिजनक नहीं है जो मुसलमानों के दिल को ठेस पहुँचाये। आपत्तिजनक तो जन, गन, मन में हैं जिसमें एक शख्स को भारत भाग्य विधाता यानि भारत के हर व्यक्ति को भगवान बताया गया है या कहें भगवान से भी बढ़कर।

4. इस संधि की शर्तों के अनुसार सुभाष चन्द्र बोस को जिन्दा या मुर्दा अंग्रेजों के हवाले करना था। यही वजह रही कि सुभाष चन्द्र बोस अपने देश से लापता रहे और कहाँ मर खप गए यह आज तक किसी को मालूम नहीं है। समय समय पर कई अफवाहें फैलीं लेकिन सुभाष चन्द्र बोस का पता नहीं लगा और न ही किसी ने उनको ढूँढने में रुचि दिखाई। मतलब भारत का एक महान् स्वतंत्रता सेनानी अपने ही देश के लिए बेगाना हो गया। सुभाष चन्द्र बोस ने आजाद हिंद फौज बनाई थी ये तो आप सब लोगों को मालूम होगा ही लेकिन महत्वपूर्ण बात ये है कि ये 1942 में बनाया गया था और उसी समय द्वितीय विश्वयुद्ध चल रहा था और सुभाष चन्द्र बोस ने इस काम में जर्मन और जापानी लोगों से मदद ली थी जो कि अंग्रेजों के दुश्मन थे और इस आजाद हिंद फौज ने अंग्रेजों को सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचाया था। और जर्मनी के हिटलर और इंग्लैंड के एटली और चर्चिल के व्यक्तिगत विवादों की वजह से ये द्वितीय विश्वयुद्ध हुआ था और दोनों देश एक दूसरे के कट्टर दुश्मन थे। एक दुश्मन देश की मदद से सुभाष चन्द्र बोस ने अंग्रेजों के नाकों चने चबवा दिए थे। एक तो अंग्रेज उधर विश्वयुद्ध में लगे थे दूसरी तरफ उन्हें भारत में भी सुभाष चन्द्र बोस की वजह से परेशानियों का सामना करना पड़ रहा था। इसलिए वे सुभाष चन्द्र बोस के दुश्मन थे।

5. इस संधि की शर्तों के अनुसार भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, अशफाकुल्लाह, रामप्रसाद विस्मिल जैसे लोग आतंकवादी थे और यही हमारे syllabus में पढ़ाया जाता था बहुत दिनों तक। और अभी एक महीने पहले तक ICSE बोर्ड के किताबों में भगत सिंह को आतंकवादी ही बताया जा रहा था, वो तो भला हो कुछ लोगों का जिन्होंने अदालत में एक केस किया और अदालत ने इसे हटाने का आदेश दिया है (ये समाचार मैंने इन्टरनेट पर ही अभी कुछ दिन पहले देखा था)।

6. आप भारत के सभी बड़े रेलवे स्अेशन पर एक किताब की दुकान देखते होंगे "व्हीलर बुक स्टोर" वो इसी संधि की शर्तों के अनुसार है। ये व्हीलर कौन था? व्हीलर सबसे बड़ा अत्याचारी था। इसने इस देश की हजारों माँ, बहनों और बेटियों के साथ बलात्कार किया था। इसने किसानों पर सबसे ज्यादा गोलियां चलवाई थी। 1857 की क्रांति के बाद कानपुर के नजदीक बिठुर में व्हीलर और नील नामक दो अंग्रेजों ने यहां के सभी 24 हजार लोगों को जान से मरवा दिया था चाहे वो गोदी का बच्चा हो या मरणासन्न हालत में पड़ा हुआ कोई बुड्ढा। इस व्हीलर के नाम से इंग्लैंड में एक एजेंसी शुरू हुई थी और वहीं भारत में आ गयी। भारत आजाद हुआ तो ये खत्म होना चाहिए था, नहीं तो कम से कम नाम ही बदल देते। लेकिन वो नहीं बदला गया क्योंकि ये इस संधि में है।

7. इस संधि की शर्तों के अनुसार अंग्रेज देश छोड़ के चले जायेंगे लेकिन इस देश में कोई भी कानून चाहे वो किसी भी क्षेत्र में हो नहीं बदला जायेगा। इसलिए आज भी इस देश में 34735 कानून वैसे के वैसे चल रहे हैं जैसे अंग्रेजों के समय चलता था।

क्रमशः

नेतृत्व कौन करे?

स्व. स्वामी वेदानन्द (तीर्थ)

ओइम् सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा युङ्क्ष्व सुत्ते हरितो रोहितश्च ये वा सद्यन्नरुषा वीरवाहो हुवे देवानां जनिमानि सत्तः।। ऋ. 7/42/2

हे (अग्ने) अग्रगन्तः। (सनवित्तः) सनातन से प्राप्त वेदविहित (अध्वा) मार्ग (ते) तेरे लिए (सुगः) सुगम है। अतः (सुते) इस जगत् में (हरितः) हरण शक्तियों स्वर एवं (रोहितः) आरोहण साधनों को (युङ्क्ष्व) जुटा (वा) तथा (सद्यन्) सद्म में (ये) जो (अरुषा) हिंसा न करने वलो तथा हिंसित न होने वाले (वीरवाह) वीरों के वाह हैं उनको भी युक्त कर। मैं (सत्तः) बैठा बैठा (देवानाम्)। विद्वानों के (जनिमानि) जन्मों की (हुवे) कामना करता हूँ, प्रशंसा करता हूँ।

नेता का कार्य अपने अनुयायियों को सुमार्ग पर चलाना है। सुमार्ग प्रायः सुगम है। वा दुर्मार्ग दुर्गम होता है। वेद कहता है नेतः। तेरे लिए वह मार्ग सरल है जो सनातन से चला आ रहा है। सभी जानते है वेदमार्ग सनातन है, सब से पुरातन है। वेदमार्ग ऋजु का मार्ग है। सृष्टि के आरम्भ में जब मनुष्यों की सृष्टि हुई उस समय प्रभु ने जो ज्ञान दिया, वह सनवित्त कहलाता है। सनवित्त शब्द का एक अर्थ होता है- श्रद्धा भक्ति से प्राप्त ज्ञान! श्रद्धा का अर्थ है सत्य के अनुसार आचरण। सत्याचरण द्वारा प्राप्त मार्ग सरल होता है, इसमें किसी को सन्देह नहीं हो सकता। सत्य सदा सरल होता है, असत्य कुटिल होता है। वेद विहित मार्ग सत्याचरण का प्रेरक होने के कारण सदा सुगम और सरल होता है।

इस मार्ग पर चलने के लिए वाहन चाहिए- वेद उन्हें 'हरित और रोहित' नाम देता है। कई महानुभाव इन शब्दों का अर्थ हरे और लाल घोड़े करते हैं, उनके मार्ग में एक कठिनता अरुष शब्द उपस्थित करता है, उसका अर्थ भी लाल ही है। इन शब्दों का यथार्थ अर्थ वही है जो हमने किया है। जीवन का लक्ष्य अथवा व्यवहार इन शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाता है। जीवन में दुर्गुण त्याग सबसे प्रथम कार्य है। वेद में इसी भाव से प्रार्थना आती है- विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव। यद्भदंतन्न आसुव- जगदुत्पादक दिव्य देव। हम से सब दुर्गुण दूर कर और जोभद्र है वह हमें दे। इसमें देखिए- पहले दुरितों- दुगुणों के नाश की कामना की गई है, अतः प्रकृत मन्त्र में आदेश है कि हरितो- हरण सामर्थ्यों- दुर्गुण विदारक शक्तियों से युक्त हो जाओ। केवल दुरित त्याग से प्रयोजनसिद्धि नहीं हो सकती, अतः कहा कि रोहिते- आरोहण शक्तियों से भी संयुक्त हो। आरोहण का अर्थ है ऊपर उठना। वेद का आदेश है - आरोहरणमाक्रमणं जीवतो जीवतो अयनम् = ऊपर को उठना, आगे बढ़ना प्रत्येक जीव का अयन = प्राप्तव्य है। दूसरे स्थान पर कहा है- उद्यानं ते पुरुष नावयानम् (अ. 8/1/6) हे मनुष्य! ऊपर जाना तेरा कर्तव्य है न कि नीचे जाना। मनुष्य को ऐसा यत्न करना चाहिए कि वह उत्तरोत्तर उन्नति करता हुआ इसी जन्म में जीवन्मुक्त हो जाए। मनुष्य जीवन की उन्नति की यही पराकाष्ठा है। मनुष्य भूल से ऐसा आचरण न कर बैठे। जिससे उसका पतन होकर मानवता का अधिकार छिन जाए और अगला जन्म उसका मनुष्य न होकर कहीं किसी अधम योनि का न होने पाए।

यह तो सभी मानते हैं कि वेद शास्त्र तथा संसार के अन्य सभी ग्रन्थों का अधिकारी मनुष्य है। संसार में जितने प्राणी हैं। मनुष्य उन सबमें श्रेष्ठ है। वेद मनुष्य को आदेश करता है कि हे मनुष्य! इसी दशा पर ही सन्तुष्ट न रह, वरन् इससे आगे बढ़। यथा-उत्क्रामातः पुरुष माऽवा पन्थाः (अ. 8/1/4)= हे पुरुष! इस अवस्थ से ऊपर उठ, गिर मत। मनुष्य में अज्ञानता के कारण प्रमाद होता ही है, उसके कारण मनुष्य से भूल होकर अनिष्टाचरण की संभावना रहती है, अतः वेद बार बार अनेक प्रकार से सावधान करता है, ऋग्वेद में कहा है - उच्छ्रयस्व महते सौभगाय=महान

सौभाग्य के लिए तू ऊपर को जा। अर्थात् उन्नति का परिणाम अकल्याण, अमंगल न होकर महान सौभाग्य होना चाहिए। अनेक बार देखा गया है कि मनुष्य उन्नति कर रहा होता है किन्तु उसका परिणाम भयंकर विनाश होता है। वेद सावधान करता हुआ आदेश करता कि भली भांति सोच विचार कर पग उठाओ।

मनुष्य के अन्दर बहुत बल है। मनुष्य ही वीर मनुष्यों का नेता अथवा उत्थानकर्ता हो सकता है। वीरों के उत्थानकर्ताओं को वेद ने एक विशेषण दिया है- अरुष। यह बहुत गम्भीर एवं मनन करने योग्य पद है। इसका अर्थ है कि वे हिंसा=घातपात न करें। मनु महाराज ने कहा भी है- अहिंसयैव कार्य्य भूतानां श्रेयोऽनुशासनम्= प्राणियों को उनकी भलाई की सीख भी अहिंसा से, प्रेम प्रीति से देनी चाहिए। मारने में वीरता नहीं है, किन्तु इसका यह भी भाव न समझा जाए कि वह मार ही खाता रहे, घातपात का शिकार होता रहे। अरुष शब्द का एक भाव और भी है- न रूठने वाला और जिससे दूसरे रुष्ट नहों। जिनके हित करने में प्रवृत्त हुए हैं उनकी भूल, उनके प्रमाद, उनके लिए उपकार से उन परं रूठना नहीं चाहिए। वे तो अज्ञानी हैं, अपना हित अहित नहीं जानते, अतः उनसे क्या रुष्ट होना। जब पुरुष ऐसा विशाल होगा, तभी उपकार भी हो सकेगा। साथ ही अपना व्यवहार ऐसा बनाना चाहिए कि जिससे साथियों आदि को रुष्ट होने का अवसर न आए। ऐसे महामनुष्यों के द्वारा जनकल्याण निस्सन्देह होता है। ऐसी ही प्रवृत्ति, प्रकृति के महामनुष्य देव'पद के नेतृत्व अधिकारी होते हैं।

वास्तविक लोकोपकार तो कर ही वीताराग (काषाय वस्त्र धारण करने मात्र से कोई वीताराग नहीं हो जाता है।) सकता है। रागद्वेष में फंसा मनुष्य पहले अपना उपकार करे, उद्धार करे।

ऋषिवर!

हम अबोध आपके बोध की कहानी क्या लिखें?

आपने संध्या और योगानुष्ठान का आदेश दिया था, हम आज तक संध्या मंत्रों का शुद्ध उच्चारण भी न सीख सके। योगानुष्ठान का अब तक स्पर्श भी नही किया। योगानुष्ठान के लिए तो किसी विशेष अधिकारी ने उपदेशकों को यहां तक कह दिया कि रजाई में बैठे-बैठे ही गायत्री जप कर लिया करो, इतना ही पर्याप्त है।

आपने संघटन का पाठा पढ़ाया था। हम पदलोलुपता के ग्रास बनकर विघटन की ओर ही पग बढ़ाते जा रहे हैं।

आपने वेदों की ओर अग्रसर करने वाली वेदवाणी के विस्तार का आदेश दिया था, परन्तु हम पूज्या गम्भीर गिरा सरस्वती संस्कृत के स्थान पर आंगल भाषा की ही पूजा कर रहे हैं।

आपने गुरुकुल विद्यालयों में वेदों के गम्भीर अध्ययन का आदेश दिया था, परन्तु हमारी साधारण दृष्टि भी अब इस ओर नहीं जा रही है।

आप ब्रह्मचर्य के धनी थे। आपने इन संस्थाओ में ब्रह्मचर्य का जीवित रूप देने का आदेश दिया था। गुरुकुलों के वायुमण्डल का स्त्री सम्पर्क से रहित और नवीन आकर्षणों से ब्रह्मचारियों को बचाए रखना ही इस कार्यक्रम का साध्य था, परन्तु अब हम उस दिशा में भी शिथिल होते जा रहे हैं।

आपने सहशिक्षा का विरोध किया था, परन्तु हम सहशिक्षा का विरोध तो क्या करेंगे अपने हाथों से उसका संचालन कर रहे हैं।

आपने वेद प्रचार के आचरण और विचार दो साधन चुने थे, परन्तु हमने उनमें से पहले साधन को स्पर्श करना ही छोड़ दिया है।

आपने देशोद्धार की दृष्टि से वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम का पुनरुद्धार करना आवश्यक समझा था, हम उन्हें अनावश्यक समझ रहे है।

आपके बोध की स्मृति में हम अपने अबोध के लिए बोध दिवस प्रतिवर्ष मनाते हैं, परन्तु प्रबोध की ओर एक पग भी आगे बढ़ा नहीं है।

इसलिए......

आपके बोध की कहानी क्या लिखें?

ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती

गोमांस निर्यात की साजिश ऐसे हुई असफल

मुजफ्फरहुसैन

पिछले दिनों योजना आयोग द्वारा गठित एक समिति ने सिफाशि की कि गोमाँस के निर्यात पर लगा प्रतिबंध हटा लिया जाए। इसके बाद देश में गोमाँस के कारोबार से जुड़े लोग उछलने लगे। उन्हें लगने लगा कि अब तो उनके हाथों में अलीबाबा का खजाना आ गया है। समिति की इस वाहियात और अदूरदर्शी सिफारिश से करोड़ों गोभक्त असमंजस में पड़ गए। ज्यों ही यह समाचार अहिंसावादियों और राष्ट्रवादी बुद्धिजीवियों तक पहुंचा वे बेचैन हो उठे। सारे देश में जबरदस्त आंदोलन खड़ा हो गया। सरकार के इस पाप की चहुं ओर भर्त्सना होने लगी। कई राष्ट्रवादी संगठनों ने इस सिफारिश के खिलाफ राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री एवं अन्य लोगों को पत्र लिखा और इस सिफारिश को न मानने की हिदायत दी। जनाक्रोश को देखने के बाद सरकार ने अपने आप पाप को धोने के लिए यह बहाना तलाश कर लिया कि सरकार की ऐसी कोई नीति नहीं है और न ही इच्छा। यह सब तो एक 'क्लेरीकल एरर' का नतीजा है। अतएव सरकार इस गलती को सुधार कर अपनी पुरानी नीति पर ही कायम रहेगी। यानि गोमांस का निर्यात नहीं होगा। सरकार इसे कर्मचारी की गलती बता रही है यह तो जनता के साथ एक भोंडा मजाक है।

यदि सरकार का ध्यान इस ओर नहीं खींचा जाता तो करोड़ों गो माताएं छुरी के नीचे आ जातीं और उनके मांस का व्यापार करने वालों के वारे-न्यारे हो जाते। सरकार कुछ भी कहे लेकिन कोई यह तर्क स्वीकार करने वाला नहीं है। क्या इस पर कभी सरकार ने ठंडे दिमाग से विचार किया है? 'क्लेरिकल एरर' का परिणाम लाखों गायों की हत्या, ऐसा पाप करने वाले को क्या सरकार और समाज कभी दण्डित करेगा? क्या वास्तव में यह भूल थी या फिर सरकार और मांस निर्यात का कोई षड्यंत्र? कृषि विभाग के कुछ सूत्रों का कहना है कि जो कुछ भी हुआ है वह एक षड्यंत्र के तहत हुआ है। जनता का विरोध होने के पश्चात् जब सरकार को अपना चेहरा आईने में दिखाई देने लगा तो उसने इसे अनजाने में हुई भूल से निरूपित कर दिया। यदि वास्तव में सरकार इसे गलती मानती तो निश्चित ही क्षमा याचना करती है। अपनी भूल के लिए लोकसभा में पछतावा जाहिर करती। लेकिन सरकार के चेहरे पर ऐसा कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा।

यह तो साजिश है।

माना जा रहा है कि सरकार और मांस निर्यातकों ने मिलकर यह षड्यंत्र रचा था। एक बार गो मांस के निर्यात से प्रतिबंध हट गया होता तो मांस निर्यातकों को रोकना कठिन होता है। इन लोगों ने सभी प्रकार के प्रबंध कर लिए थे। सचिवालय में बैठे उनके दलाल अपने सामने विदेशी मुद्रा के ढेर देख रहे थे। इसलिए उन्होंने कुछ नहीं कहा। इतने गहरे षड्यंत्र को 'क्लेरीकल एरर' कहना सरकार का पाखंड और निरा झूठ है। यह एक सामान्य बात है कि जब जनता चिल्लाती है उस समय सरकार की आंखें खुलती हैं। ऐसी भूल करते रहना सरकार की पुरानी आदत है। 2001 में भी दसवीं पंचवर्षीय योजना को लागू करने के अवसर पर सरकार ने 5000 कत्लखानों के खोलने की घोषणा करने का दुस्साहस किया था। लेकिन समय रहते

अरविंद भाई पारेख और राजेन्द्र जोशी जैसे सैकड़ों अहिंसावादियों ने सरकार के इस सपने को साकार नहीं होने दिया था।

12वीं पंचवर्षीय योजना में भी सरकार ने एक ऐसे ही कार्य समूह की रचना की है। जिसका मुख्य काम योजनाओं के लिए सुझाव देना है। कृषि मंत्रालय से जुड़े पशुपालन एवं डेरी विभाग को मांस और कत्लखाने का विषय दिया गया है। इसने जो रपट तैयार की है उसे पढ़ते ही शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। कत्ल के आंकड़े तेजी से बढ़ना कार्यरत कत्लखानों का आधुनिकीकरण करना अधिक से अधिक आधुनिक मशीन से सुसज्जित कत्लखाने खोलना, मांस के निर्यात में आने वाले अवरोधों को हटाना और यह सब कुछ करने के लिए क्या किया जाए? आदि बातों का समावेश किया गया है। इसने एक भयानक सुझाव दिया है कि गोमांस निर्यात पर जो वर्तमान में प्रतिबंध है उसे दूर करने के लिए कड़े कदम उठाए जाएं। रपट में स्पष्ट रूप से लिखा गया है कि इस समय जो मांस भेड़, बकरे, भैंस, खरगोश और अन्य पक्षियों का निर्यात किया जाता है वह पर्याप्त नहीं है। उसकी मांग कम होती जा रही है इसलिए भारतीय कृषि और पशु पालन पर अंतिम झटका गाय की हत्या का ही होगा।

रपट में दिए गए सुझावों में कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्योंकि मांस और कत्लखाने के विभागीय समूह के सदस्यों के वरिष्ठ अधिकारी डा. एस.के. रंजन हैं, जो हिंद एग्रो इंडस्ट्रीज के निर्देशक हैं। यह कम्पनी मांस का निर्यात करने वाली बड़ी कम्पनियों में से एक है। जो लोग मांस के धंधे में हैं उन्हें ही सुझाव देने का अधिकार देना कितना न्यायिक और नैतिक है? इस विभागीय समूह के एक और सदस्य डा. एन कोण्डयूया हैं। वे पिछली तीन पंचवर्षीय योजनाओं से इस प्रकार के समूह के सदस्य के रूप में अपनी सलाह दे रहे हैं।

रक्त के सौदागर

मांस निर्यात को प्रोत्साहन देने वाले कौन से नेता हैं, इसकी जानकारी भी पाठकों को होना अनिवार्य है। इनमें सबसे अग्रणी योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोन्टेक सिंह आहलूवालिया, उद्योग मंत्री आनन्द शर्मा, कृषि मंत्री शरद पवार और प्रोफेसर अभिजीत सेन हैं। यदि आपके शरीर में धड़कता दिल है तो इन मांस और रक्त के सौदागरों को इतना अवश्य कहिए कि भारत माता को इतना मत नोचो कि भविष्य की पीढ़ी तुम्हारा नाम लेने से भी घृणा करें। गो मांस के निर्यात पर तो भारत सरकार इस प्रकार की बेहूदी मिसालें देकर अपना पल्ला झाड़ सकती है, लेकिन क्या वह इस बात का दावा कर सकती है कि भारत मे गोवध नहीं होता है और इसके मांस का भक्षण खुलेआम नहीं होता है? यदि ऐसा नहीं है तो फिर 'बीफ' के नाम पर बेचा जाने वाला मांस किस पशु का है?

जब गोमांस का विरोध किया जाता है तो यह बहाना बना लिया जाता है कि 'बीफ' का अर्थ होता है भैंस का मांस। बैलों को काटना और उसका मांस चोरी-छिपे विदेशों में भेज देने का कुचक्र बड़े पैमाने पर चलता है। गोवंश की सही परिभाषा नहीं होने से बैल और भैंस के नाम पर गो हत्या बड़ी संख्या में होती है। 'बीफ' के नाम पर कंटेनरों में भरकर गोमांस चोरी-छिपे आज भी विदेशों में भेजा जाता है। भैंस का काटना हमारे यहां कानूनी रूप से वैध है। इसलिए इस आड़ में गोहत्यारों को पकड़ पाना मुश्किल है। ब्रिटिश काल से चला आ रहा 'बीफ' शब्द अत्यंत भ्रामक है। गोवंश को इस शब्द से अलग किया जाना चाहिए। वरना 'बीफ' के नाम पर गोवंश की अवैध हत्या कभी बंद नहीं होगी।

प्रचण्ड परिवर्तन के प्रबल स्वर

कवि - रामनिवास 'गुणग्राहक'

पाखण्डों में पुण्य ढूंढता, वह विश्वास बदलना है।
गौरव से सिर ना उठने दे वो आकाश बदलना है।

विश्व गुरू था भारत सब यहाँ शिक्षा लेने आते थे।
फ्रेंच, जर्मनी, अमेरिकन सब हमको गुरू बनाते थे।।
विद्या, वैभव वालों के पुरखे भी शीश झुकाते थे।
बड़े प्रेम से हम उनको जीवन-सिद्धान्त सिखाते थे।।
आज वही हमसे कहते हम लड़ते और लड़ाते थे।
आर्य लोग गौ मांस पकाकर खाते और खिलाते थे।
पतित विचारों से परिवर्तित ये इतिहास बदलना है... गौरव से सिर.......

दिखला देना है हमको हम ऋषियों की सन्तान हैं।
बल में शूर-शिरोमणि हैं और पूरे विद्यावान हैं।
वह सब करके दिखला देते जो हम लेते ठान हैं।
उठो और दिखला दो कि हम मानवता के मान हैं।
हमें लांछित करने के जो भी चलते अभियान हैं।
एक-2 की चुन-2 कर हमने कर ली पहचान है।
लो संकल्प हमें उनका दिया अहसास बदलना है....गौरव से सिर.

मचल उठा भारत का यौवन, उनकी कुटिल कुचालों से।
वैचारिक संग्राम करेंगे कालिख मलने वालों से।।
भारतीयता दूषित न होने देंगे नक्कालों से।।
मुक्त करेंगे गंगा को पश्चिम के गन्दे नालों से।
एक साथ लड़ लेंगे हम सब अन्दर बाहर वालों से।
बाहर की घातक चालों से अन्दर के धरा दलालों से।
देशद्रोह से मिलने वाला भोग विलास बदलना है...गौरव से सिर.......

ठान लिया तो ठान लिया प्रण पूरा करके छोड़ेंगे।
पतित पावनी भारतीय चिन्तन धारा को मोड़ेंगे।
इसे प्रदूषित करने वालों के सपनों को तोड़ेंगे।
हो उनको बल का घमण्ड तो गर्दन पकड़ मरोड़ेंगे।
सोये हुए साथियों की चेतनता को झकझोरेंगे।
ठान लिया है इस युग को ऋषियों के युग से जोड़ेंगे।
इसके लिए तुझको भी तो रामनिवास बदलना है।
गौरव से सिर न उठने दे वो आकाश....

Printed, Published and Owned by श्री सत्येन्द्र सिंह आर्य Printed at तिलक प्रिंटिंग प्रेस, 2046, बाजार सीताराम, दिल्ली-6 (name of printing press with full Address) and published from केरल वैदिक मिशन, नई दिल्ली (Place of publication with full address) Editor प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु।